ISSN 0972 - 1746

सी.एस.आई.आर. - आई.आई.टी.आर. राजभाषा पत्रिका

विषविज्ञान संदेश

2013-14

अंक 21-22 वर्ष 2013-14

सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

संविधान में हिन्दी भाषा के विकास के लिए निर्देश

351, संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करें ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें।

सी.एस.आई.आर.–आई.आई.टी.आर. राजभाषा पत्रिका

विषविज्ञान संदेश

2013-14

सी.एस.आई.आर.–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विषविज्ञान संदेश

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

निदेशक	अध्यक्ष
डॉ. मुकुल दास, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. पूनम कक्कड़, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. डी. कार चौधरी, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. देवेन्द्र परमार, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. आर.सी. मूर्ति, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
श्री बी.डी. भट्टाचारजी, वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक	सदस्य
श्री निखिल गर्ग, वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. एन. मणिक्कम, वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. पी.डी. द्विवेदी, प्रधान वैज्ञानिक	राजभाषा अधिकारी व सदस्य
श्री सी.पी. अरूणन, प्रशासक नियंत्रक	सदस्य
श्री बी.के. मिश्रा, वित्त एवं लेखा अधिकारी	सदस्य
श्री विनय कुमार, भंडार एवं क्रय अधिकारी	सदस्य
श्री योगेन्द्र सिंह, वरिष्ठ अधीक्षक इंजीनियर (विद्युत)	सदस्य
श्री आर.के. उपाध्याय, कार्यपालक इंजीनियर	सदस्य
डॉ. स्मृति प्रिया, वैज्ञानिक	सदस्य
श्री प्रदीप कुमार, अनुभाग अधिकारी (सामान्य)	सदस्य
श्री जगन्नाथ, अनुभाग अधिकारी (स्थापना)	सदस्य
श्री यू.एस. मिश्रा, अनुभाग अधिकारी (सामान्य)	सदस्य
श्री चन्द्र मोहन तिवारी, हिंदी अधिकारी	सचिव

सम्पादक मण्डल

डॉ. आर.सी. मूर्ति	संपादक
डॉ. आलोक पाण्डे	सह-संपादक
डॉ. डी.कार. चौधरी	सदस्य
डॉ. कैलाश चन्द्र खुल्बे	सदस्य
डॉ. (श्रीमती) प्रीति चतुर्वेदी भार्गव	सदस्य
श्रीमती सुमिता दीक्षित	सदस्य
श्री राम नारायण	सदस्य
श्री चन्द्र मोहन तिवारी	सदस्य

प्रकाशक

सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

महात्मा गाँधी मार्ग, पोस्ट बाक्स - 80, लखनऊ - 226 001

पत्र व्यवहार का पता :-

निदेशक

सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

महात्मा गाँधी मार्ग, पोस्ट बाक्स-80 लखनऊ - 226 001

दूरभाष : (0522) 262822, 2621856, 2620106

फैक्स : +91-522-2628227

ई-मेल : rpbdiitr@yahoo.com, director@iitrindia.org

वेबसाइट : www.iitrindia.org

(पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने विचार हैं)

पत्रिका के संदर्भ में समस्त जानकारी के लिए कृपया संपर्क करें :-

डॉ. आर.सी. मूर्ति

संपादक

राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' एवं

प्रमुख, विश्लेषणात्मक रसायन प्रभाग

सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

महात्मा गाँधी मार्ग, पोस्ट बाक्स-80, लखनऊ - 226 001

दूरभाष : 2620107, 2620106, 2627586, 2614118, 2627389

फैक्स : +91-522-2628227

विषविज्ञान संदेश

विषय सूची

''सौन्दर्य प्रसाधनों पर पराबैंगनी विकिरण का प्रभाव ''

अंकित वर्मा, हरीनारायण कुशवाहा एवं डॉ. रतन सिंह राय..... 01

कीटनाशी रसायनों का मानव स्वास्थ्य एवं खाद्य पदार्थ के व्यापार पर प्रभाव

जयराज बिहारी..... 05

प्रतिरक्षा तंत्र पर जिंक ऑक्साइड नैनो कणों का प्रभाव

प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी, रूचि रॉय..... 10

बाजार में बिकने वाली शाकाहारी और मांसाहारी करी नमूनों का विश्लेषण

सुमिता दीक्षित एवं मुकुल दास..... 13

कृत्रिम मिठास: एक मीठा जहर

रूपिन्द्र कुमारी, डा0 देवेन्द्र कुमार पटेल, डा0 नसरीन गाजी अंसारी..... 19

''परिसंकटमय औद्योगिक अपशिष्ट एवं प्रबंधन: भारतीय दृष्टिकोण''

डा0 वीरेन्द्र मिश्र..... 25

''क्लोरीन किसी भी समय बन सकती है, घातक''

डा0 जीसी किस्कू, गीतान्जलि जायसवाल, पोखराज साहू..... 38

डा0 सुधीर मेहरोत्रा एवं मिस अंकिता मिश्रा

जीव रसायन विभाग,..... 47

पेयजल की गुणवत्ता : आवश्यकता तथा उपाय

अल्ताफ हुसैन खान, गणेश चन्द्र किस्कु..... 55

आर्सेनिक: घातक हो सकती है विषाक्ता!

ललित प्रताप चंद्रवंशी..... 61

पर्यावरण एवं समाज में ध्वनि प्रदूषण का दुष्प्रभाव

डा0 जी.सी. किस्कू, अमित कुमार, पेश्वराज साहू, ऋषभ वर्मा एवं विनय कुमार..... 75

चमड़ा उद्योग के अपशिष्टों का पर्यावरणीय दुष्प्रभाव एवं उनका जैवीय अपघटन

गौरव सक्सेना, आकाश मिश्रा, राम चंद्र, अभय राज, राम नरेश भार्गव..... 86

दूध के नमूनो में आक्सीटोसिन की मात्रा एवं उसके संभावित दुष्प्रभाव

मुकुल दास, सुमिता दीक्षित एवं मंजरी मिश्रा..... 90

संरक्षक की ओर से

डॉ. सी.एस. नौटियाल
संरक्षक : राजभाषा पत्रिका एवं निदेशक
सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
लखनऊ

प्रिय पाठकों, आपके समक्ष राजभाषा पत्रिका **''विषविज्ञान संदेश''** का यह अंक प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार प्रसन्नता हो रही है। मुझे विश्वास है कि राजभाषा हिंदी के माध्यम से विज्ञान के क्षेत्र में हो रही नवीन जानकारियों से हमारा जीवन लाभान्वित होगा। यद्यपि हिंदी हमारी राजभाषा है फिर भी विज्ञान के क्षेत्र में हो रही निरन्तर नई उपलब्धियों की जानकारी जन सामान्य तक नहीं पहुँच रही है।

इस पत्रिका का प्रकाशन इसी उद्देश्य से किया जा रहा है ताकि वैश्विक स्तर पर हो रहे वैज्ञानिक अनुसंधान, प्रौद्योगिक विकास, पर्यावरण संरक्षण, जैवविविधता, स्वास्थ्य सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन एवं नैनोमैटीरियल विषाक्तता जैसे अध्ययनों की अद्यतन जानकारियां पाठकों तक पहुँच सके। इन्ही उद्देश्यों की पूर्ति हेतु इस अंक में अनुभवी वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकीविदों और शोधकर्ताओं द्वारा लिखे गये उच्च कोटि के लेख सम्मिलित किये गये हैं जिससे जनमानस विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे वैज्ञानिक शोध परिणामों के आधार पर प्रेरणादायक सूचनाएं प्राप्त कर सकें और उनके आधार पर जीवन मूल्यों को स्थापित कर सकें।

यह पत्रिका विगत कई वर्षों से अपने उच्च कोटि के लेखों, वैज्ञानिक प्रस्तुतिकरण एवं सारगर्भित सामग्री द्वारा निरंतर भारत सरकार के राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अन्तर्गत नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, लखनऊ द्वारा पुरस्कृत रही है। इसके लिए पत्रिका से जुड़े संपादक मण्डल, लेखक एवं सभी सहयोगी बधाई के पात्र हैं।

हमें पूर्ण विश्वास है कि विषविज्ञान संदेश का यह अंक पाठकों को नयी जानकारियों, सूचनाओं एवं विषविज्ञान के क्षेत्र में हो रहे नित्य नये कार्यकलापों से परिचित करायेगा। मुझे आशा है कि पत्रिका में प्रकाशित लेख मनोरंजक, वैज्ञानिक दृष्टि से उपयोगी, ज्ञानवर्धन एवं उद्देश्य पूर्ण होंगे। मैं एक बार पुनः पत्रिका प्रकाशन से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति को बधाई देता हूँ, जिन्होंने इसके प्रकाशन में अपना महत्वपूर्ण एवं सराहनीय योगदान दिया है।

मैं इस पत्रिका के उज्ज्वल एवं सफल भविष्य की कामना करता हूँ।

चन्द्र शेखर नौटियाल

डॉ. सी.एस. नौटियाल

भारत सरकार
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड
उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

प्रमाण – पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान एवं अस्पताल ने जून/दिसंबर 2013 को समाप्त छमाही अवधि में पत्रिका प्रकाशन एवं हिन्दी कार्यशाला के आयोजन का सराहनीय कार्य किया है। (विष विज्ञान संदेश) एवं वार्षिक प्रतिवेदन (द्विभाषी) के प्रकाशन

राजभाषा कार्यान्वयन हेतु इस कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों का यह प्रयास अत्यंत प्रशंसनीय है ।

(संजय कुमार पाण्डेय)
सचिव
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं
उप प्रबंधक, मानव संसाधन
(सुविधा प्रबंधन - राजभाषा)
एच.ए.एल. उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

(चन्द्र कैलाश विश्वकर्मा)
अध्यक्ष
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं
महाप्रबंधक
एच.ए.एल. उपसाधन प्रभाग,
लखनऊ

भारत सरकार
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड
उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान एवं अस्पताल ने जून/दिसम्बर 2013 को समाप्त छमाही अवधि में हिन्दी कार्यशाला के आयोजन का सराहनीय कार्य किया है।

राजभाषा कार्यान्वयन हेतु इस कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों का यह प्रयास अत्यंत प्रशंसनीय है।

(संजय कुमार पाण्डेय)
सचिव
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
प्रबन्धक (राजभाषा)
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

(चन्द्र कैलाश विश्वकर्मा)
अध्यक्ष
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
कार्यवाहक अधिशासी निदेशक
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

संपादकीय

डॉ. आर.सी. मूर्ति
सम्पादक : विषविज्ञान संदेश एवं मुख्य वैज्ञानिक
सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
लखनऊ

विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे नित्य नये बहुप्रौद्योगिकीय एवं बहुआयामी विकास के साथ साथ इसके ज्ञान के प्रचार-प्रसार को जनमानस तक राजभाषा हिंदी के माध्यम से पहुँचाना अपने आप में एक बड़ी चुनौती है। हमारा संस्थान इस चुनौती को स्वीकार करते हुए विगत दो दशकों से न केवल विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे नये विकास बल्कि उसके द्वारा मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों की जानकारी भी प्रदान कर रहा है। इसी क्रम में यह संस्थान विषविज्ञान सम्बन्धी जनोपयोगी जानकारियों को राजभाषा हिंदी के माध्यम से जनसाधारण तक पहुचाने हेतु 'विषविज्ञान संदेश' नामक वैज्ञानिक पत्रिका का सम्पादन करता रहा है। इस देश की अधिकांश जनसंख्या विदेशी भाषा का कम ज्ञान होने तथा अल्पशिक्षित होने के कारण अन्य भाषाओं में प्रकाशित वैज्ञानिक जानकारियों से वंचित रह जाती है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु हमारी पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' वैज्ञानिक शोध उपलब्धियों, शोध सूचनाओं एवं बहुप्रौद्योगिकीय जानकारियों को निरंतर पाठकों तक पहुँचाने का प्रयास करती है, ताकि उनके स्वास्थ्य, जीवन एवं पर्यावरण में अनुकूल सुधार हो सके।

वैज्ञानिक शोध पूर्णतः व्यक्ति की स्वतंत्र अभिव्यक्ति एवं चिन्तन का प्रतिफल होता है और किसी का स्वतंत्र चिन्तन, विचार एवं उसका कार्यान्वयन उसकी मातृभाषा से ही सृजित होता है। इसके लिए ज्ञान विज्ञान की अधिकतम ग्राहयता भी उसकी मातृभाषा में होती है। इससे स्पष्ट है कि ''विषविज्ञान संदेश'' पत्रिका राजभाषा हिंदी के माध्यम से शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों एवं अन्य पाठकों तक विविध वैज्ञानिक सूचनाओं एवं शोध परिणामों को पहुँचाने में सफल रही है। इसी का परिणाम है कि भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अन्तर्गत नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, लखनऊ द्वारा विगत कई वर्षों इस पत्रिका को पुरस्कृत किया जाता रहा है जो अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है तथा इस पत्रिका की स्वीकार्यता को दर्शाता है। इसके लिए लेखक, संपादक मण्डल के सभी सदस्य तथा अन्य सहयोगी प्रशंसा के पात्र हैं। इस पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु संस्थान के निदेशक, डॉ. सी.एस. नौटियाल के कुशल मार्गदर्शन एवं नेतृत्व हेतु संपादक मंडल अत्यन्त आभारी है।

इस पत्रिका के संपादन से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति एवं उन सभी सहयोगियों, वैज्ञानिकों, कर्मचारियों एवं लेखकों के प्रति आभार मैं प्रकट करता हूँ, जिन्होने इस पत्रिका के संपादन हेतु निःसंकोच अपना अमूल्य योगदान दिया और ''विषविज्ञान संदेश'' पत्रिका को लोकप्रिय बनाने में अपना कुशल एवं वैचारिक योगदान किया।

सद्भावनाओं सहित।

डॉ. आर.सी. मूर्ति

भारत सरकार
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड
उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि भारतीय विष विज्ञान अनु॰संस्थान एवं अस्पताल ने जून/दिसम्बर 2013 को समाप्त छमाही अवधि में द्विभाषी वार्षिक प्रतिवेदन के प्रकाशन का सराहनीय कार्य किया है।

राजभाषा कार्यान्वयन हेतु इस कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों का यह प्रयास अत्यंत प्रशंसनीय है।

(संजय कुमार पाण्डेय)
सचिव
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
प्रबन्धक (राजभाषा)
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

(चन्द्र कैलाश विश्वकर्मा)
अध्यक्ष
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
कार्यवाहक अधिशासी निदेशक
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

भारत सरकार
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड
उपसाधान प्रभाग, लखनऊ

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान ने जून/दिसम्बर 2014 को समाप्त छमाही अवधि में हिन्दी कार्यशाला के आयोजन का सराहनीय कार्य किया है।

राजभाषा कार्यान्वयन हेतु इस कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों का यह प्रयास अत्यंत प्रशंसनीय है।

(राजीव कुमार)
अध्यक्ष
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
अधिशासी निदेशक
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

''सौन्दर्य प्रसाधनों पर पराबैगनी विकिरण का प्रभाव ''

अंकित वर्मा, हरीनारायण कुशवाहा एवं डॉ. रतन सिंह राय

प्रकाश जीव विज्ञान प्रभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

''सौन्दर्य प्रसाधन वह सामग्री है, जो मानव शरीर की संरचना या कार्यों को प्रभावित किए बिना शरीर के आकर्षण को निखारती है।'' इनमें त्वचा की नमी बनाये रखने वाले पदार्थ (क्रीम), इत्र, लिपिस्टिक, नाखून रोगन (नेलपॉलिश), आँखों के लिए विभिन्न प्रकार के रंग युक्त काजल, बाल रंगने के प्रसाधन और मुखीय श्रृंगार आदि सौन्दर्य उत्पाद आते हैं।

यह मुख्यतः रासायनिक यौगिकों के मिश्रण होते हैं जिन्हे कुछ प्राकृतिक स्त्रोतों से प्राप्त किया जाता है, तथा कई यौगिकों को कृत्रिम तरीकों से तैयार किया जाता है।

वर्तमान समय में इन पदार्थों का उपयोग काफी बढ़ गया है एवं शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में इसका व्यापक उपयोग हो रहा है। यह सर्वविदित है कि सौन्दर्य प्रसाधनों में विषैले रसायन होते हैं, तथा जिनका प्रयोग बहुत ही खतरनाक है। प्रसाधनों के उत्पादों में एक विस्तृत श्रंखला शामिल है। इनमें से कुछ त्वचा या आँखों में जलन या एलर्जी के रूप में स्वास्थ्य समस्याएं पैदा कर सकते हैं। सामान्यतः ये समस्याएं अल्पकालिक होती हैं और इन उत्पादों का उपयोग बंद कर इनसे बच सकते हैं लेकिन यदि इस्तेमाल करते रहे तो ये अल्पकालिक समस्याएं दीर्घकालिक हो सकती हैं जिसके फलस्वरूप गंभीर बीमारी होने का खतरा हो जाता है।

सूर्य के मूल में एक परमाणु प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है जिसे विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम के रूप में जाना जाता है इस ऊर्जा में रेडियोवेव, माइक्रोवेव अवरक्त विकिरण, दृश्य प्रकाश, पराबैगनी विकिरण, एक्स विकिरण और गामा किरणें भी शामिल हैं। ये विकिरण अपनी तरंग दैर्घ्य के अनुसार विभेदित किये जाते हैं।

इन्फ्रारेड विकिरण हमें सूरज की गर्मी देता है, दृश्य प्रकाश हमें हमारे आसपास की दुनिया को देखने के लिये होता है। पराबैगनी विकिरण हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। पराबैगनी तरंगो की खोज जर्मनी के भौतिकशाली जॉन बिल्हेल्म रिट्र ने 1801 में की थी।

fon;r pEcdh; fofdj.k d idkj %&

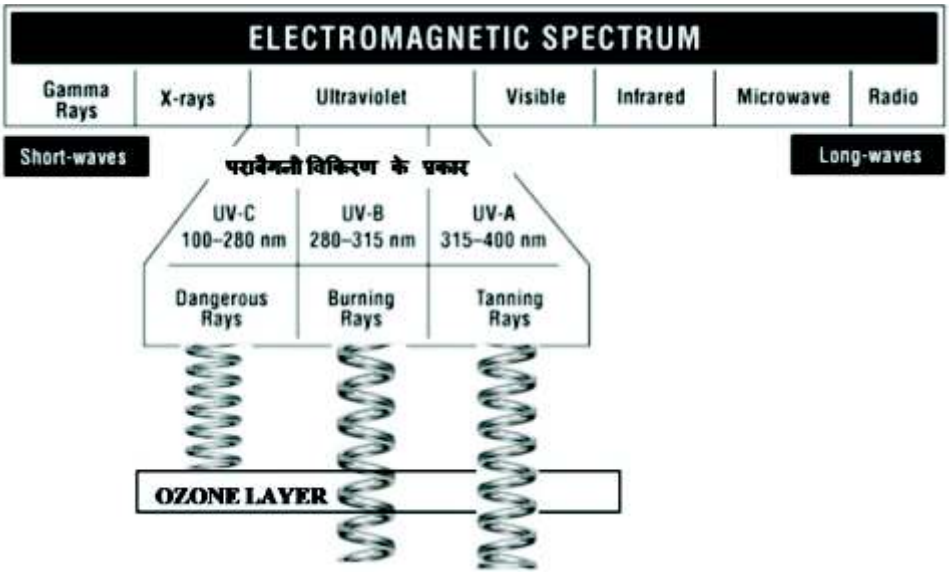

पराबैगनी विकिरण, विद्युत चुम्बकीय विकिरण होता है, इसकी तरंग दैर्ध्य रेंज 100-400 नैनोमीटर (एन एम) होती है। पराबैगनी विकिरण तरंगदैर्घ्य के आधार पर तीन प्रकार का होता है।

1-पराबैगनी -अ (UV-(A) :- इसकी तरंग दैर्घ्य 320-400 एनएम के बीच होती है। यह हमारी त्वचा (डर्मिस) तक भेदता है यह त्वचा में समय से पहले बुढ़ापा व टैनिंग उत्पन्न करता है।

2-पराबैगनी- ब (UV-(B):- इसकी तरंग दैर्घ्य 280-320 एनएम के बीच होती है। यह त्वचा की बाहरी परत में भेदता है त्वचा में टैनिंग के साथ साथ सनबर्न (धूप से जलना) और त्वचीय कैंसर भी उत्पन्न करता है।

3-पराबैगनी -स (UV-(C) :-यह 100 से 280 एमएम के बीच तरंग दैर्घ्य के साथ बहुत ऊर्जावान है यह बहुत खतरनाक विकिरण है हालांकि UV-C विकिरण ओजोन परत द्वारा फिल्टर हो जाता है और पृथ्वी तक नहीं पहुंचता कृत्रिम रूप से UV-C को बनाकर इसका प्रयोग जीवाणु व अतिसूक्ष्म जीवाणुओं को मारने के लिए किया जाता है। इस प्रकार UV-A एवं UV-B पृथ्वी पर सूर्य के प्रकाश के साथ आती है परन्तु UV-C ओजोन परत द्वारा रोक ली जाती है।

जैसा कि हम जानते है कि हमारा भारत वर्ष उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र में आता है और पूरे दिन भर सूर्य प्रकाश प्रचुर मात्रा में रहता है।

प्रकाश विषाक्तता (फोटोटाक्सीकोलॉजी):-

कुछ वातावरण प्रदूषक, रासायनिक पदार्थ व औषधियाँ पराबैगनी किरणों की उपस्थिति में क्रियाशील हो जाते हैं और सक्रीय आक्सीकारक उत्पन्न करते है जो हमारे स्वास्थ्य/त्वचा पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। कई शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि फोटोटाक्सीसिटी की प्रतिक्रिया सौन्दर्य पदार्थो में इस्तेमाल पदार्थों एवं सिंथेटिक पदार्थों में भी संभावित है। विभिन्न पशुमॉडल एवं कोशिकाओं पर इन पदार्थो की फोटोटाक्सीसिटी का आंकलन किया गया है।

प्रकाश विषाक्तता की क्रिया में, प्रकाश एवं यौगिकों (अवयवों) की क्रिया में ऑक्सीजन के साथ मिलकर क्रियाशील ऑक्सीजन प्रजाति (O^{-}_{2}, $^{1}O_{2}$, $^{\bullet}OH$, H_2O_2) बनाता है।यह अभिक्रिया दो प्रकार (प्रकार I व प्रकार II) से होती है।

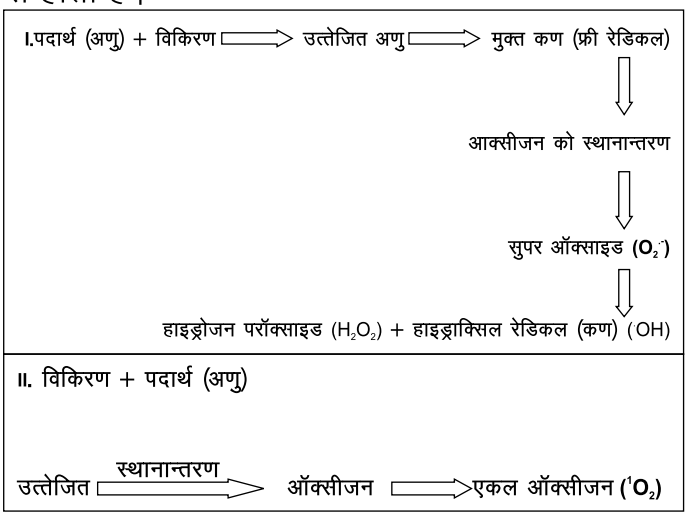

प्रकार I में प्रकाश सर्वेदित (विकिरण संवेदित) अणु एक इलेक्ट्रान ऑक्सीजन अणु को ट्रांसफर करता है और सुपरऑक्साइड ($O^{\bullet}_{2}$) हाईड्राक्सी ($^{\bullet}OH$), एवं हाइड्रोजन ऑक्साइड बनता है।

प्रकार II में प्रकाश संवेदित अणु, ऊर्जा को ऑक्सीजन पर स्थानांतरण कर एकल ऑक्सीजन ($^{1}O_2$) बनाता है।

दोनो अभिक्रिया ऑक्सीजन आश्रित एवं स्वतंत्र क्रिया

होती है, जो कोशिकी तंत्र के बायोमालीक्यूल को लक्ष्य करती है जो हमारे त्वचीय कोशिका के डी.एन.ए. व झिल्ली को क्षति पहुँचाते और अन्ततः हमारी कोशिका को नष्ट कर देती है।

सौन्दर्य उत्पादों के फोटोटाक्सिक क्षमता का आंकलनः

सौन्दर्य प्रसाधन क्रीमी जैल होता है, जो त्वचा को नरम कोमल, आराम के साथ साथ रक्षित भी करता है जिससे त्वचा आकर्षक एवं सुन्दर दिखती है। इन प्रसाधनों को उपयोग बहुत पुराना है, एवं इन दिनों इसका प्रयोग काफी बढ़ गया है। वर्तमान में पाँच हजार से ज्यादा यौगिक रासायनिक समूहों से संबंधित हैं, जिनका इस्तेमाल किया जा रहा है।

कई सौन्दर्य प्रसाधन के अवयव सौर विकिरण अवशेषित कर, प्रकाश विषाक्तता (फोटोटॉक्सिक) हो जाते हैं। यह त्वचा के कई बायोमालीक्यूल से प्रतिक्रिया करते हैं। बायोमालीक्यूल एवं सौर विकिरण की संयुक्त क्रिया त्वचा के लिये खतरनाक होती है। भारत जैसे उष्णकटिबन्धीय देशों में सौर विकिरण के साथ पराबैंगनी विकिरण अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक होता है और यह प्रसाधन उपयोगकर्ताओं के लिये खतरनाक हो सकता है।

मेथाइल पैराबेन (Methylparaben)

इस रसायन का प्रयोग व्यापक रूप से सौन्दर्य प्रसाधनों को संरक्षित करने के लिए किया जाता है। प्रसाधनों में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोकने तथा उत्पादों को अधिक समय तक सुरक्षित रखने के लिये इसका प्रयोग किया जाता है। मेथाइल पैराबेन पराबैगनी विकिरण का अवशोषण कर फोटोटॉक्सिसिटी प्रदर्शित करता है, ऐसा हाल ही में हुये शोधों से पता चला है। प्रकाश विषाक्तता (फोटोटॉक्सिसिटी) से त्वचा की कोशिकाओं पर बुरा प्रभाव पड़ता है जिससे त्वचीय कैंसर होने की संभावना बढ़ जाती है।

एजूलीनी (Azulene)

एक प्रकार का नीले रंग का हाइड्रोकार्बन है, जिसका उपयोग त्वचीय सौन्दर्य प्रसाधनों में किया जाता है। यह पराबैगनी विकिरण को अवशेषित कर डी.एन.ए. को क्षति पहुँचाता है और उत्परिवर्तन करता है। इस प्रकार

यह प्रकाशीय उत्परिवर्तन करता है।

प्रसाधनों में सुगंध के लिये जो पदार्थ उपयोग में लाये जाते हैं वे प्रकाशीय एलर्जी एवं प्रकाशीय विषाक्तता उत्पन्न करते हैं। एक शोध में यह पाया गया कि ओकमॉस (Oakmoss) पराबैगनी अ (A) विकिरण की उपस्थिति में हीमोलाइसिस करता है। जो कि 26% तक होता है। इसके अलावा बेन्जाइल अल्कोहल, नींबू का तेल, नारंगी तेल, अल्फा एमाइल एल्डिहाइड द्वारा 5-11% तक पराबैगनी विकिरण की उपस्थिति में हीमोलाइम करता है।

फिनाइलसिसएमीनडाईएमीन (PD)

एक प्रकार का एरौमेटिक अमीनो यौगिक है जिसका उपयोग डाई एवं रंग युक्त सौन्दर्य प्रसाधनों को बनाने में होता है। यह पराबैगनी विकिरण को अवशोषित कर मुक्त मूलक को उत्सर्जित करता है और बायोमालीक्यूल को क्षति पहुँचाता है। इसका मुख्य उपयोग बालों को रंगने में किया जाता है। अतः हमें सीधे सूर्य के विकिरण से बचना चाहिए जब हम इसका उपयोग करें।

इसके अलावा और भी घटक/यौगिक हैं जो सौन्दर्य प्रसाधनो में प्रकाश विषाक्तता उत्पन्न कर हमारे त्वचा पर हानिकारक प्रभाव डालते है।

पराबैगनी विकिरणों से सुरक्षाः-

त्वचा को पराबैगनी किरणों से बचाने के लिये प्रकाश रोधी लेप का इस्तेमाल करना चाहिए। यह त्वचा में मिलैनिन की कार्यक्षमता को सीमित व बनाये रखता है और एक सुरक्षा कवच की तरह कार्य करता है। वैज्ञानिकों द्वारा किये गये शोधों के अनुसार इस प्रकार के लेप (सनस्क्रीन क्रीम) त्वचा पर पड़ने वाली पराबैगनी किरणों को शोषित या परिवर्तित कर हमारी त्वचा की रक्षा करते है।

अतः इस प्रकार से पराबैगनी विकिरण व इसके द्वारा उत्तेजित सौन्दर्य प्रसाधनों के तत्वों के दुष्प्रभावों से बचना चाहिए। इसके प्रभाव से बचने के लिये कुछ ऐसे वृहद बचाव वाले सनस्क्रीन क्रीम का निर्माण करना होगा, जिसका प्रकाश सुरक्षा स्तर ज्यादा हों। इसके अलावा प्रकाश विषाक्तता उत्पन्न करने वाले सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग करते हुए सूर्य के प्रकाश से बचें। यथा संभव हमें प्राकृतिक सौन्दर्य तत्वों का ही उपयोग करना चाहिए।

★★★

कीटनाशी रसायनों का मानव स्वास्थ्य एवं खाद्य पदार्थ के व्यापार पर प्रभाव

जयराज बिहारी

पूर्व वैज्ञानिक, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कीटनाशी की श्रेणी में वे सभी रसायन आते है जिनका प्रयोग कीट फफूंद, खर-पतवार या फिर चूहे या अन्य ऐसे जन्तुओं को मारने के लिए किया जाता है, जो फसल/अनाज को नष्ट करते है। इनमें वे रसायन भी सम्मिलित हैं जिन्हें ऐसे कीट जन्तुओं को मारने के लिए प्रयोग किया जाता है, जो रोगाणु के वाहक का कार्य करते हैं, जैसे मच्छर मलेरिया के रोगाणु, प्लास्मोडियम, के वाहक का कार्य करते है। यदि इन कीटनाशी रसायनों का प्रयोग न किया जाये तो विश्व में उपलब्ध खाद्य सामग्री का 50 प्रतिशत तक नष्ट हो सकता है। जहाँ एक ओर संसार में बढती जनसंख्या के लिए भोजन उपलब्ध कराने की चुनौती है, वही दूसरी ओर विश्व व्यापार की दृष्टि से खाद्य पदार्थ सामग्री को व्यापार विकासशील देशों के लिए आमदनी का जरिया और विकास का स्रोत है। दोनों ही परिस्थितियों में खाद्यान के समुचित उत्पादन, सुरक्षित भंडारण एवं यातायात सुनिश्चित करने में कीटनाशी रसायनों का प्रयोग महत्वपूर्ण है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं खाद्य तथा कृषि संगठन द्वारा खाद्य वस्तुओं में कीटनाशी रसायनों के मानकों का निर्धारण किया जाता है, जिससे ये मानक मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण की सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ विश्व व्यापार में सहायक हों और नियामक के रूप में प्रयोग किये जा सकें।

भारत एक कृषि प्रधान देश है, परन्तु कृषि उत्पाद की सुरक्षा, गुणवत्ता एवं निर्यात हमारे लिए चुनौती हैं। कीटनाशी रसायनों का कृषि उत्पाद की सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान होता है। इनकी उपयोगिता मुख्यतया फसल, या पौधों पर कीटों के आक्रमण रोकने, उत्पाद की गुणवत्ता सुनिश्चित करने, खरपतवार नियंत्रण एवं भंडारण में होती है। इस प्रकार संसार की बढती जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराने के लिए कीटनाशी रसायनों का प्रयोग आवश्यक है परन्तु ये कीटनाशी रसायन विषाक्त होते है और इनकी प्रयोगविधि के अनुरूप यदि इनका प्रयोग संतुलित अथवा सावधानीपूर्वक न किया जाये तो मानव स्वास्थ्य को भी हानि पहुँच सकती है।

फसल में प्रयुक्त कीटनाशी (पेस्टिसाइड्स) के अवशेष कुछ मात्रा में फसल/उत्पाद पर रह जाते हैं, जो भोजन में उपस्थित रहकर स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकते है। इनकी उपस्थिति के कई कारण होते है, जिनमें सर्वप्रथम प्रयुक्त पेस्टिसाइड की मात्रा एवं रसायनिक गुण, उसका कितनी बार प्रयोग हुआ है, किस फसल/उत्पाद पर प्रयोग किया गया है, किस प्रकार प्रयोग किया गया है, प्रयोग के समय मौसम, प्रयोगों के बीच रखा गया अंतराल, तथा अंतिम प्रयोग के कितने दिनों बाद फसल काटी गई है, इन सभी कारकों पर निर्भर करता है।

खाद्य पदार्थ में पेस्टिसाइड अवशेष का नियंत्रण विभिन्न देशों की सरकारों द्वारा विश्व व्यापार संगठन

के स्वच्छता एवं पादप-स्वच्छता (Sanitary and Phyto Sanitary, SPS), समझौतें के अंतर्गत खाद्य पदार्थ की सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु तथा निर्यात को सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से किया जाता है।

कीटनाशी अवशेषों एवं उनका भोजन श्रृंखला में प्रवेश पूरे विश्व में एक चिंता का विषय है क्योंकि यह सीधा उपभोक्ता से संबंध रखता है।

भारत में कीटनाशी अवशेष का खाद्य पदार्थों में नियंत्रण पूर्व में Prevention of Food Adulteration Act (PFA) 1954 के अंतर्गत होता था जो अब भारतीय खाद्य संरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (Food Safety and Standards Authority) Act तथा कीटनाशक अधिनियम (Insecticide Act) 1968 के अंतर्गत होता है।

कीटनाशी का प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर दो प्रकार से पड सकता है। एक तो इनका प्रयोग गलत इरादे से किसी की हत्या या आत्महत्या के लिए किया जा सकता है, या फिर इनके व्यावसायिक प्रयोग से कुछ मात्रा लंबे समय तक शरीर में प्रवेश करती रहने के फलस्वरूप मनुष्य जाने अनजाने दीर्घ अवधि तक इनके सम्पर्क में रहता है। दूसरी संभावना से प्रभावित जनसंख्या अधिक होती है और इसकी पहचान कर पाना भी कठिन होता है जबकि तीव्रगति से एकाएक अधिक मात्रा में शरीर में प्रवेश के फलस्वरूप विषालुता के लक्षण स्पष्ट रहते है। कीटनाशी से उत्पन्न गंभीर दुष्प्रभाव शरीर में गई इनकी मात्रा, प्रवेश माध्यम (मुख, त्वचा या श्वास) इनका उपापचय, वसा में घुलनशीलता तथा व्यक्ति विशेष के स्वास्थ्य स्तर पर निर्भर करते है।

भारत में 60 वा 70 के दशक में कीटनाशकों के प्रारंभिक प्रयोग में हुई संयोगवश मिलावट की दुर्घटनाओं के फलस्वरूप कीटनाशक अधिनियम 1968 बनाया गया तदुपरान्त 1971 में विनियम बनाये गये। अधिनियम के मुख्य ध्येयों में कीटनाशक के प्रयोग के लिए, पहले इनका पंजीकरण आवश्यक हो गया, जिससे मानव स्वास्थ्य, जन्तुओं एवं पर्यावरण पर इनके प्रतिकूल प्रभाव न पडने के साथ इनके प्रयोग से कीट प्रबंधन एवं खाद्य उत्पादन में बढोत्तरी हो सके।

पंजीकरण के लिए विनिर्माणकर्ता को केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड की पंजीकरण समिति को निर्धारित प्रारूप पर आवश्यक तथ्यों की जानकारी समेत आवेदन करना होता है। आवेदन में दी गई कीटनाशी की प्रभावशीलता के दावे, मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण स्वास्थ्य की सुरक्षा एवं कीटनाशी की विषालुता के दावों की वैज्ञानिक आधार पर समीक्षा की जाती है। पंजीकरण दिये जाने के पूर्व कीटनाशी प्रयुत्ता खाद्य पदार्थ में अधिकतम अवशेष सीमा (Maximum Residue Level, MRL) को प्रस्तावित मात्रा का मूल्यांकन एवं निर्धारण पंजीकरण समिति द्वारा निर्धारित दिशा निर्देशों के आधार पर किया जाता है।

भारत में 245 से अधिक कीटनाशी रसायनों को उत्पादन, व्यापार एवं निर्देशानुसार प्रयोग हेतु कीटनाशी अधिनियम 1968 की धारा 9(3) के अंतर्गत पंजीकरण किया जा चुका है।

अच्छी कृषि प्रणाली के अंतर्गत खाद्य पदार्थ पर आये अवशेष, प्रयुक्त कीटनाशी की विषाक्तता अध्ययन के फलस्वरूप निकाली गई इस कीटनाशी की

भोजन में प्रतिदिन स्वीकार्य मात्रा (जिसका जीवन भर प्रयोग से भी मानव स्वास्थ्य पर कोई हानि न पहुंचे) और विभिन्न खाद्य पदार्थों के माध्यम से शरीर में भोजन के साथ पहुष्चने वाली उस कीटनाशी विशेष की (टीएमडीआई) कुल मात्रा की समीक्षा के उपरान्त अधिकतम अवशेष सीमा का खाद्य पदार्थ विशेष पर निर्धारण किया जाता है।

विश्लेषण विधि में उन्नति के अनुरूप इसमें समय-समय पर पुनरीक्षण एवं निरंतर हो रहे विकास संशोधन का प्रविधान होता है। विश्व व्यापार संगठन के अनुसार भारत के खाद्य उत्पादों में इन कीटनाशी अवशेषों की निर्धारित मात्रा से ऊपर की मात्रा खाद्य पदार्थों के निर्यात में एक रूकावट बनती है।

इस दृष्टि से खाद्य पदार्थों में इन कीटनाशी अवशेषों का सही विश्लेषण अति आवश्यक है। विश्लेषण विधि ऐसी होनी चाहिए जो वैज्ञानिक आधार पर विश्व में सर्वमान्य हो और विभिन्न स्थानों (देशों) में किये गये विश्लेषण के परिणामों से मेल खाता हो।

भारत सरकार के कृषि मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर भारत में विभिन्न खाद्य पदार्थों में कीटनाशी अवशेष के मापन की एक संजाल परियोजना 2005 में प्रारम्भ की गई थी जिसमें देश की 22 उच्च स्तरीय प्रयोगशालाओं ने भाग लिया। इसका संचालन भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा किया गया।

राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न सब्जियों, फलों, दूध, दलहन, अंडे व मांस मछली के नमूने लिये गये और उसमें कीटनाशी अवशेष का मापन किया गया। भारत की उच्च स्तरीय प्रयोगशालाओं द्वारा अति संवेदनशील उपकरणों जैसे गैस क्रोमोटोग्राफी, मास स्पेक्ट्रोमेट्री, और लिक्विड क्रोमेटोग्राफ मास स्पेक्ट्रोमीट्री (LCMS/MS) का प्रयोग किया गया।

वर्ष 2008-2013 के मध्य लगभग 27000 सब्जियों के नमूने लिए गये जिनमें 734 नमूनों में कीटनाशी/अवशेष की मात्रा निर्धारित अधिकतम अवशेष सीमा से अधिक पाई गई। जबकि फलों में 10,000 से अधिक नमूनों का विश्लेषण और 92 नमूनों में निर्धारित अधिकतम अवशेष सीमा से अधिक कीटनाशी की मात्रा पाई गई।

इस प्रकार के नियामक कार्यक्रमों का उद्देश्य देश में कीटनाशी का ऐसा प्रयोग सुनिश्चित करना है जिससे मानव स्वास्थ्य, जन्तुओं वनस्पति एवं मृदा को हानि न पहुंचने के साथ-साथ संपूण पर्यावरण की गुणवत्ता भी बनी रहे। इनसे प्राप्त आंकडे विभिन्न सरकारी संस्थाओं द्वारा आवश्यकतानुसार हस्तक्षेप व ऐसे कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में उपयोग होते हैं जो किसी भी क्षेत्र में सीमा से अधिक प्राप्त अवशेष मात्रा के नियंत्रण में सहायक हों।

पिछले पाँच दशकों में भारत में कीटनाशी रसायनों का उपयोग काफी बढ़ा है जो पिछले दशक में लगभग 4200 मेट्रिक टन था। यह पूर्व के दशक के उपयोग से कम है जिसका मुख्य कारण बहुतायत में प्रयोग किये जाने वाले हानिकारण कीटनाशी जैसे डी0डी0टी0, हेप्टाक्लोर, एंडोसल्फान आदि खेती के प्रयोग में बंद कर दिये गये है। ऐसे नये कीटनाशी रसायन भी विकसित हुए हैं जिनका कम मात्रा में प्रयोग भी काफी कारगर होता है और इनकी पर्यावरण में अर्धायु भी काफी कम होती है।

खाद्य संबंधी कानूनों को मजबूत और एकल अधिनियम बनाने के लिए भारत सरकार ने 2002 में घोषणा की, अंततः संसद द्वारा खाद्य संरक्षा एवं मानक अधिनियम 2006 में बना। इसके अंतर्गत मानव उपयोग, उनके साथ संबंद्व उपभोक्ताओं के लिए सुरक्षित तथा पौष्टिक खाद्य की उपलब्धता, सुनिश्चित करने हेतु, विनिर्माण, भंडारण, वितरण, विक्रय तथा आयात नियंत्रण की परिकल्पना की गई। इसके अंतर्गत नियमों के अनुपालन के लिए 2008 में भारतीय खाद्य संरक्षा एवं मानव प्राधिकरण का गठन हुआ, जो एक बहुस्तरीय व्यवस्था के स्थान पर एकल

पंक्ति के रूप में गठित हुई।

अंतराष्ट्रीय संस्था कोडेक्स एलिमेन्टेरियस कमीशन के मानकों के साथ तालमेल रखते हुए विज्ञान आधारित खाद्य मानकों की स्थापना करना प्राधिकरण के प्रमुख उद्देश्यों में एक है।

व्यापार विकासशील देशों के लिए निर्यात, विदेशी मुद्रा अर्जित करने के साथ आर्थिक मजबूती का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। भारत जैसे देश निर्यात बढ़ाने के लिए इसलिए भी प्रयासरत रहते है जिससे वे अपने साधन संसाधन एवं मानव संसाधन का देश के विकास में उपयोग कर सकें।

भारतीय अर्थव्यवस्था मूलरूप से कृषि आधारित है। अतः कृषि उत्पादों का निर्यात विदेशी मुद्रा अर्जन के साथ साथ बडी संख्या में उत्पाद से जुडे लोगों को रोजगार उपलब्ध कराता है। इन उत्पादों की विशेष खपत मुख्यतया विकिसत देशों में होती है। ये देश मानव स्वास्थ्य एवं खाद्य पदार्थो की गुणवत्ता के प्रति अति सजग होते हैं। उनके यहां कडे कानून यह सुनिश्चित करते है कि मिलावटी, अशुद्व अथवा विषाक्त

खाद्य पदार्थ उपभोक्ता तक न पहुंचने पाये। इस दृष्टि से इन देशों को खाद्य उत्पाद अनाज, मसाले अथवा समुद्री भोजन का निर्यात करने के लिए मानकों के अनुरूप उच्च कोटि की गुणवत्ता अत्यंत आवश्यक होती है।

यह आशा की जा सकती है हमारे देश में अच्छी प्रयोगशाला प्रणाली के अंतर्गत रसायनिक विशलेषण में प्रयुक्त उच्च कोटि एवं क्षमता के उपकरण, कुशल मानव संसाधन का प्रयोग कर यदि हम अच्छी कृषि प्रणाली के अंतर्गत खाद्यान उत्पादन करने तथा खाद्य पदार्थो के प्रसंस्करण में अपनी दक्षता बना लें तो न केवल देश में स्वस्थ्य भोजन उपलब्ध करा सकेंगें वरन् हमारे खाद्यान की निर्यात हेतु गुणवत्ता विश्व बाजार में प्रतिस्पर्धा करने योग्य सिद्ध होगी।

★★★

प्रतिरक्षा तंत्र पर जिंक ऑक्साइड नैनो कणों का प्रभाव

प्रेमेन्द्र धर द्विवेदी, रूचि रॉय

खाद्य विषविज्ञान प्रभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

वर्तमान नैनोटेक्नालॉजी के युग में प्रयोग में लाई जाने वाले कई नैनो कणों में से जिंक ऑक्साइड एक महत्वपूर्ण नैनो कण है जिसका उपयोग बडे पैमाने पर कई वस्तुओं में किया जाता है जैसे कि फूड एडीटिव्स, पेंट, प्रसाधन सामग्रियां आदि। जिंक आक्साइड नैनो कणों की विषाक्त प्रतिक्रियाओं पर कई रिपोर्टो द्वारा यह चिंता दर्शायी गई है कि इनके इस्तेमाल से पहले इन कणों की पूरी तरह से जांच होनी चाहिए। यह कण प्रतिरक्षा कोशिकाओं जैसे मैक्रोफेजेज में फेगोसाइटोसिस एवं इंडोसाइटोसिस की प्रक्रिया द्वारा प्रवेश पाते है। जिस प्रक्रिया में यह पी0आई0 3 के0/मेपकेस तंत्र को इस्तेमाल करतें है। इन नैनो कणों का इतना दुष्प्रभाव होता है कि यह कोशिकाओं को मार देता है। कोशिकाओं को मारने की प्रक्रिया औटोफेगी एवं एपोपटोसिस द्वारा होती है। जिंक आक्साइड के नैनो कण प्रतिरक्षा कोशिकाओं की सतह से टॉल-लाइक-रिसेप्टर्स के द्वारा कोशिकाओं के साथ पहचाने जाते है और औटोफेगोसोम्स में पाए जाते है।

जहाँ तक इन कणों के माध्यमिक प्रतिरक्षा तंत्र पर प्रभाव का सवाल है यह कण एस0आर0सी0 एवं टी0 एच 2 सिग्नलिंग द्वारा ज्वलंत प्रतिक्रियायें करवाता है (चित्र 1), जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि औध्योगिक एवं उपभोक्ता उत्पादों में इस्तेमाल होने वाला जिंक ऑक्साइड नैनो कण संभवतः भविष्य में एक वैकल्पिक कैंसर विरोधी चिकित्सकीय एजेंट के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

जब नैनो कण प्रणालीगत संचालन में प्रवेश करते है तो वे प्रतिरक्षा कोशिकाओं एवं प्लाज्मा प्रोटीन से मिलती है।

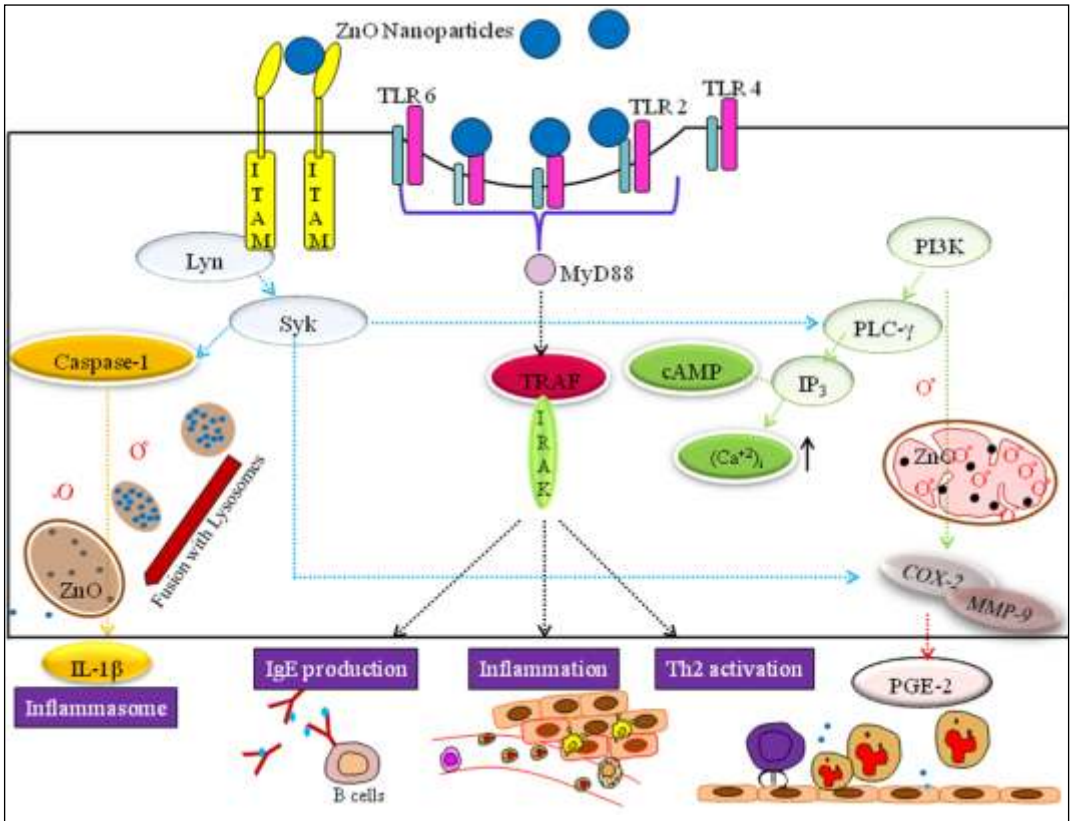

? ?? ? 1: ? ?? ? ? ? ?? ? ? ? ? ??? ?? ? ? ? ??? ?? ??? ??

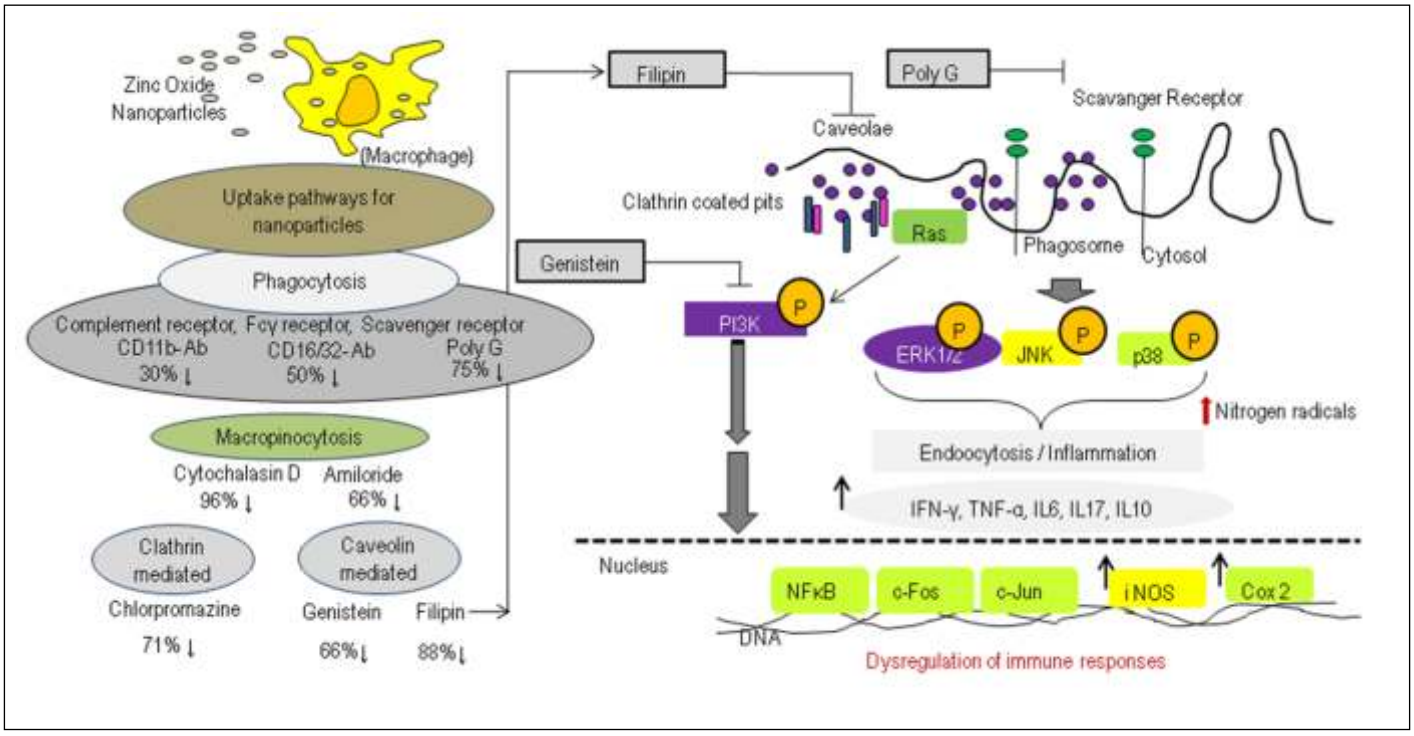

काफी छोटे होने के कारण यह कण एंडोसोम्स में छुप जाते हैं। इन कणों को प्रतिरक्षा कोशिकाएं बाह्य समझकर उल्टे-पुल्टे प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं को जन्म देती है।

जिंक ऑक्साइड नैनो कण क्लाथरिन, केवीयोली एवं स्केवेंजर रीसेप्टर्स द्वारा कोशिकाओं में प्रवेश पाते है। (चित्र 2) इन कणों के प्रवेश हेतु पी0आई0 3के0/रेस/एम ए पी के तंत्र सी जुन, सी फास और

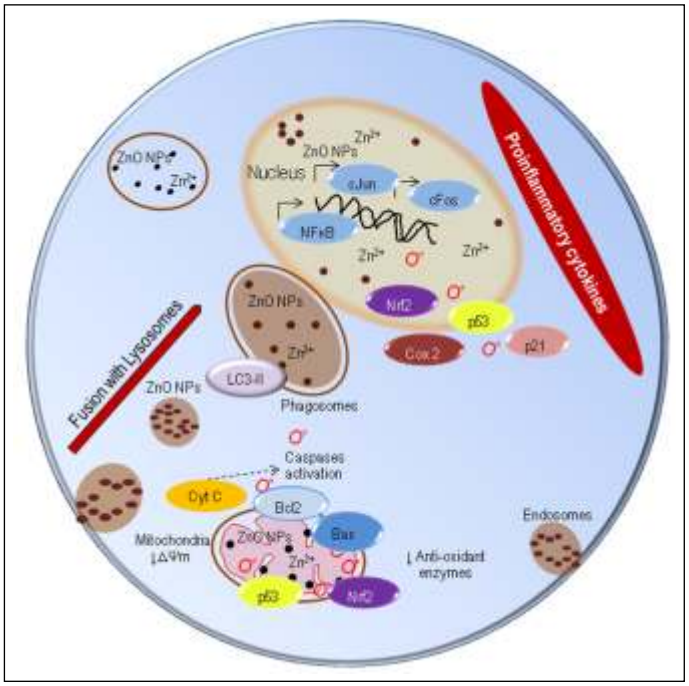

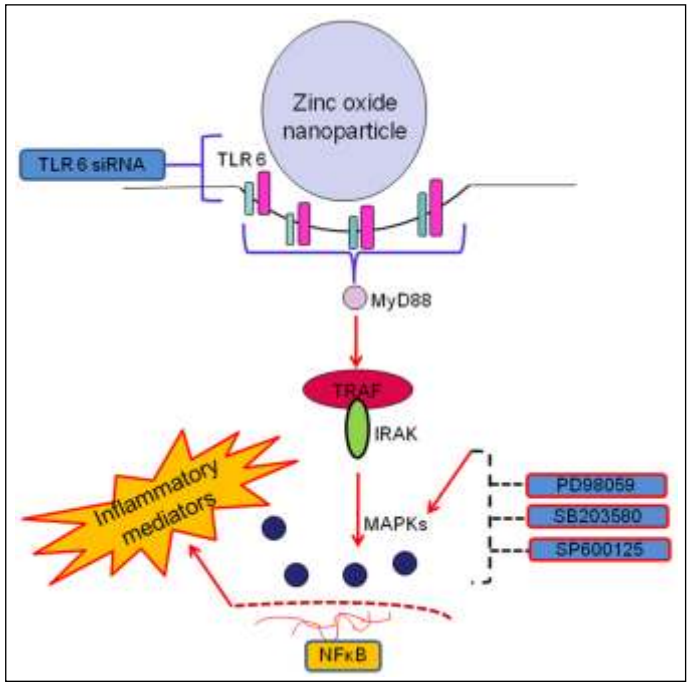

एन-एफ-कप्पा बी को बढाते है। जब खासतौर पर केवियोली रीसेप्टर्स के इनहिबिटर्स का प्रयोग किया गया तो इन नैनो कणों के सारे दुष्प्रभाव कम हो गए।

अब तक की रिपोर्टस द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि जिंक ऑक्साइड मैक्रोफेज की मुत्यु के द्वारा आक्सीडेटिव तनाव पैदा करते है। यह कण रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पीसीस को उत्पन्न कराते है जो कि लिपिड पेरोक्सीडेशन और प्रोटीनकार्बोनिल की मात्रा में वृद्वि करता है। यह कण औटोफगोसाम्स की प्रक्रिया को बढावा देता है। औटोफेगी की प्रक्रिया एपोपटोसिस के प्रक्रिया को भी बढावा देता है जो कि प्रतिरक्षा कोशिकाओं के लिए काफी हानिकारक हैं। जब एक एंटीऑक्सीडेंट (एन एसीटिल सिस्टीन) का प्रयोग किया गया तो पाया गया कि सभी दुष्प्रभाव कम हो गये। इन परिणामों से पता चलता है कि जिंक ऑक्साइड के नैनो कण ऑक्सीडेटिव प्रक्रिया द्वारा प्रभाव डालते है (चित्र 3)। इससे यह भी पता चलता है कि यदि प्रतिरक्षक क्षमता पर असर पडें तो गंभीर बीमारियों का जन्म हो सकता है।

क्योंकि जिंक ऑक्साइड के कण खाद्य पदार्थों में भी इस्तेमाल किए जाते है इसलिए इन कणों के प्रभाव को Balb/c चूहों की प्रतिरोध क्षमता पर अध्ययन किया गया। इस प्रयोग में चूहों को पहले ओवल्ब्युमीन प्रोटीन सेवित कराया गया, फिर उनमें जिंक ऑक्साइड के नैनोकणों के प्रभाव को देखा गया। यह देखा गया कि ओवल्ब्युमीन के विरोध में आई जी ई एवं आई जी जी-1 बढे मिले। टी एच 2 साइटोकाइन्स की मात्रा भी बढी मिली। मैक्रोफेसेज के ऊपर सी डी 11 बी, एम एच सी-2 की अभिव्यक्ति बढी मिली। गाटा-3, सॉक्स-3, टी एल आर 4 एवं आई एल 13, आई एल-5 की मात्रा भी प्रभावित चूहों की आंतों में बढी हुई पायी गयी (चित्र 4)। टी एल आर की अभिव्यक्ति एवं उसके सक्रियता में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले सहायकों की भी मात्रा बढी पायी गई जिससे पता चलता है कि इन कणों के दुष्प्रभाव इन्हीं क्रियाओं द्वारा होता है। जब इन सहायकों के अभिव्यक्ति का निषेध किया गया तब पाया गया कि मिले हुए दुष्प्रभाव काफी हद तक कम हो गए।

इन अध्ययनों से पता चलता है कि जिंक ऑक्साइड के नैनोकण स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डाल सकते है जिसका इस्तेमाल चिंता का कारण उत्पन्न करता है क्योंकि इससे प्रतिरक्षा तंत्र प्रभावित होता है। यह अध्ययन नैनोपारटिकल्स के भावी इस्तेमाल होने में प्रमुख मानदंडों को बनाने में भी काफी मद्दगार साबित होंगें।

★★★

बाजार में बिकने वाली शाकाहारी और मांसाहारी करी नमूनों का विश्लेषण

सुमिता दीक्षित एवं मुकुल दास

खाद्य विषविज्ञान विभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

व्यापक रूप से प्रयोग होने वाले सिंथेटिक एजोडाइज अपनी विषाक्तता के कारण वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित करते रहे है। यह माना जाता है कि कुछ स्थितियों में ये एजोसमूह संदिग्ध कैंसर जनित एरोमेटिक अमींस बना लेते हैं। इनमें से कुछ एजोडाइज अधिकतम अनुमय स्तर (maximum permissible levels) विनियमन के आधार पर खाद्य उद्योग में उपयोग किये जाते रहे हैं। विषाक्तता के आधार पर इनमें से अधिकतर एजोडाइज अनाधिकृत हैं और इनका अवैध रूप से खाद्य वस्तुओं को आकर्षित बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

फरवरी 2005 में सूडान -I एक प्रमुख समाचार

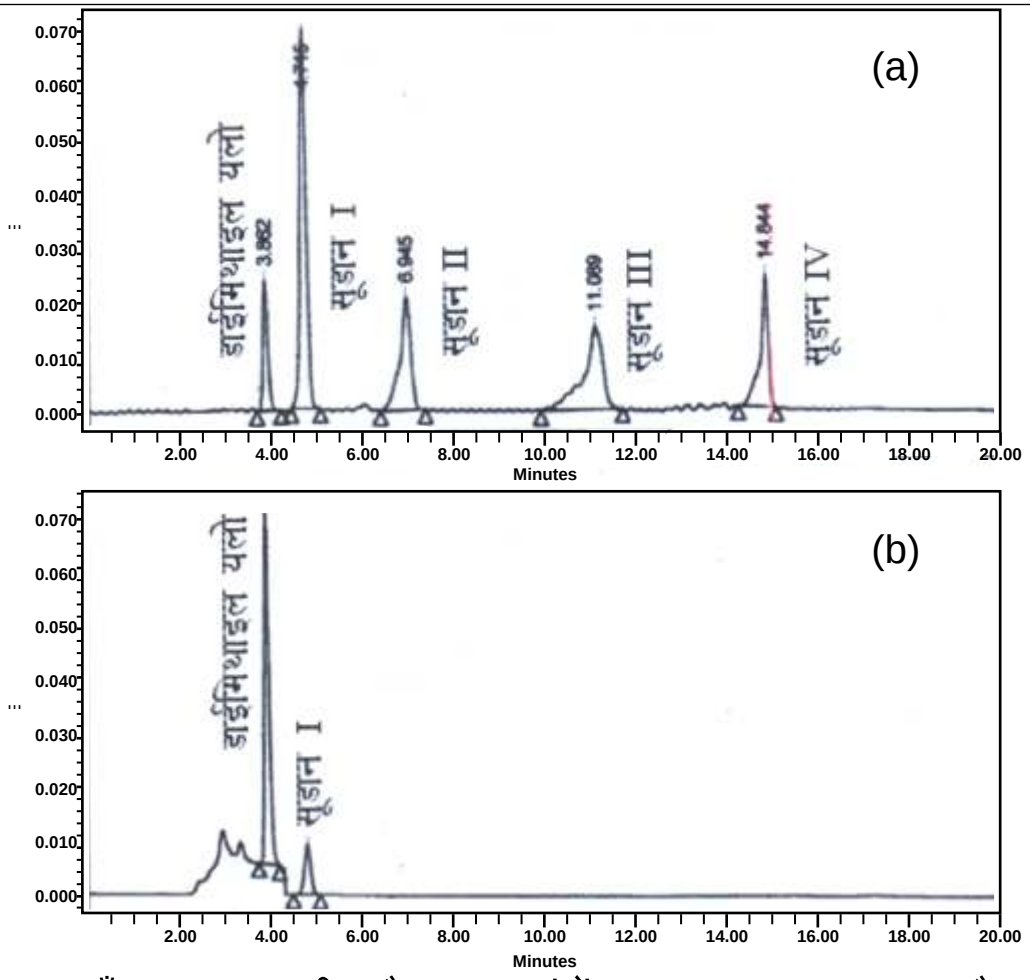

चित्र-1: पाँच वसा घुलनशील गैर अनुमत रंगों का HPCL resolution (a) और करी नमूने में पाया गया गैर अनुमत रंग

का विषय बन गया जब प्रीमियर फूड्स द्वारा उत्पादित Worcestershire सॉस में कार्सिनोजनिक सूडान-I की

सारिणी -1: करी नमूने में पाँच गैर अनुमत रंगों का पुर्नप्राप्ति (प्रतिशत रिकवरी)

रंग	डाली गई मात्रा	पायी गई मात्रा	प्रतिशत पुर्नप्राप्ति
डाईमिथाइल यलो	2.5	1.89	75.5
	5.0	3.74	74.8
	10.0	7.56	75.6
	25.0	18.90	75.6
	50.0	38.20	76.4
सूडान -1	2.5	1.91	76.3
	5.0	3.81	76.2
	10.0	7.31	73.1
	25.0	18.33	73.3
	50.0	36.80	73.6
सूडान -2	2.5	1.94	77.6
	5.0	3.65	73.0
	10.0	7.01	70.1
	25.0	18.25	73.0
	50.0	36.48	73.0
सूडान -3	2.5	1.74	69.4
	5.0	3.46	69.3
	10.0	6.83	68.3
	25.0	17.65	70.6
	50.0	35.85	71.7
सूडान -4	2.5	1.56	62.3
	5.0	3.31	66.2
	10.0	6.49	64.9
	25.0	15.74	63.0
	50.0	31.65	63.3

पाँच गैर अनुमत रंग करी नमूने में **2.5, 5.0, 10.0, 25.0** और **50** एमजी एल $^{-1}$ मात्रा में डाले गये। रंगों की पुर्नप्राप्ति दो प्रतियों में की गई और औसत आँकडे प्रस्तुत किए गए।

मिलावट पाई गयी। यह सॉस सैकडों सुपर मार्केट उत्पादों में प्रयोग होता था और नतीजन 400 से भी अधिक उत्पाद मार्केट से हटाए गए। इसी तरह 2005 और 2007 में दक्षिण अफ्रीका में कई मसाला उत्पादों में सूडान-1 पाया गया। इसके पश्चात कई पश्चिमी देशों ने इस अभियान को रोकने के लिए अपने देश के खाद्य नियमों में संशोधन किये। उदाहरणार्थ यू0के0 एफ0एस0ए0 (UKFSA) ने 2006 में मांस उत्पादों में सूडान-1 के संदूषण की चेतावनी जारी की। आर0ए0एस0एस0एफ0 (RASFF, Rapid Alert System for Food and Feed) ने 2009 में भारत से निर्यात हुए करी पाउडर में बटर एलो या डाईमिथाइल यलो की मिलावट पाई और इस पर पाबंदी लगाई।

निःसंदेह खाद्य उद्योगों में इन सिंथेटिक डाइज का एक महत्वपूर्ण आर्थिक प्रभाव है और अगर यह डाइस खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर जाते हैं तो वे मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा बन सकते है। इसलिए खाद्य

सारिणी -2 : स्थानीय बाजार से एकत्र करी नमूनों में डाइमिथाइल एलो और सूडान डाइज का निर्धारण

नमूना संख्या	डाईमिथाइल यलो (एमजी एल $^{-1}$)	सूडान-1 (एमजी एल $^{-1}$)
1.	17.58	153.65
2.	131.39	147.06
3.	17.11	254.34
4.	2.16	6.36
5.	100.94	147.33
6.	4.79	4.63
7.	10.67	33.33
8.	12.15	65.01
9.	3.31	10.63
10.	392.85	165.64
11.	2071	264.10
12.	302.36	167.14
13.	Nil	Nil
14.	Nil	Nil
15.	Nil	Nil

आँकडे प्रत्येक विश्लेषित नमूने का डुप्लीकेट मानों का औसत आँकडे का प्रतिनिधित्व करते है।

उत्पादों में इन रंगों का विश्लेषणात्मक स्क्रीनिंग और पुष्टि पद्धति विकसित करने की अति आवश्यकता है। यद्यपि सूडान का पता लगाने के लिए कई पद्धतियाँ उपलब्ध हैं पर सूडान डाइज और बटर एलो या (डाईमिथाइल यलो) का एक साथ पता लगाने के लिए कोई पद्धति विकसित नहीं है।

वर्तमान अध्ययन में हमने एक सरल रिवर्सड, फेज हाई परफार्मेस लिक्विड क्रोमैटोग्राफी (Reversed Phase HPLC) पद्धति को विकसित किया जो एक साथ सूडान-I,II,III,IV और बटर एलो की पहचान करता है। (चित्र -1)

इस पद्धति से डाईमिथाइल यलो 3.862 मिनट, सूडान-I 4.715 मिनट, सूडान-II 6.945 मिनट, सूडान-III 11.089 मिनट और सूडान-IV 14.844 मिनट में पृथक हुए जिससे इनकी मात्रा का अवलोकन किया जा सकता है।

इस पद्धति को प्रयोग लाने हेतु, इन पाँचों रंगो का मिथानॉल में घोल बनाकर अंशांकन लेखाचित्र (calibration curve) खींचा गया और यह पाया कि ये पाँचों डाइज 0.25-25 मि.ग्रा./ली तक लीनियारिटी दिखाता है (चित्र-2)

इसी प्रकार इन पाँचों रंगो को विभिन्न मात्रा में बिना रंग वाले करी नमूनों में मिलाया गया और एसीटोनाइट्राइल (Acetonitrile) में एक्सट्रैक्ट (extract) कर एचपीएलसी से उनकी प्रतिशत पुर्नप्राप्ति (recovery) देखी गई। यह पाया गया कि बटर एलो और सुडान डाइज की प्रतिशत रिकवरी 62 से 78 प्रतिशत तक है। (सारिणी -1)

इस विश्लेषणात्मक पद्धति द्वारा बाजार में बिकने वाली सुर्ख लाल रंग के शाकाहारी और मांसाहारी करी नमूनों का विश्लेषण किया गया। 15 करी नमूने (जिनमें 3 शाकाहारी थे) के विश्लेषण से यह पाया गया कि शाकाहारी करी नमूने में किसी भी रंग की मिलावट नहीं है, पर सभी मांसाहारी करी नमूनों में बटर एलो और सूडान-I की मिलावट पाई गई (सारिणी-2)

इन करी नमूनों में जहाँ डाईमिथाइल एलो 2.2 से 393 मि.ग्रा./ली. तक पाया गया, वही सूडान-I 4.6 से 264 मि.ग्रा./ली. तक पाया गया। डाईमिथाइल एलो और सूडान-1 का इतनी मात्रा में पाया जाना एक बहुत बडे खतरे का संकेत है और बताता है कि ढाबों में बिकने वाले ये करी नमूने स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक खतरनाक है।

सूडान डाइज और डाईमिथाइल एलो की विषाक्तताः-

बटर एलो या डाईमिथाइल एलो जैसा कि नाम से विदित है पहले मक्खन में डाला जाता था। ये सादे और नमकीन मक्खन में अंतर करने के लिए नमकीन मक्खन में डाला जाता था, जिससे कि वह हल्का पीला हो जाता था और आसानी से सादे मक्खन से अलग दिखता था। अब इसकी जगह पर एनेटो डाला जाता है। 1918 में इसे फूड एडीटिव्स के रूप में मंजूरी दी गई थी, परन्तु बाद में इसकी विषाक्तता के कारण हटा दिया गया था। बटर एलो एक पीले रंग का पाउडर है जो तेल में घुलनशील है। (चित्र 3) सस्ते तेल में मिलावट करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। IARC (International Agency for Research on cancer) ने इसे ग्रुप II कैंसरकारी घोषित किया है और

1952 में इसे अमेरिका ने इस पर प्रतिबंध लगा दिया कि इसे खाद्य पदार्थो में न मिलाया जाए। ग्रुप II कैंसरकारी वे हैं जो मनुष्य के लिए शायद या संभवतः कैंसरकारी हो सकते हैं। इसके पश्चात दुनिया के सभी देशों में बटर एलो को खाद्य पदार्थो में मिलाने पर प्रतिबंध लगा दिया। बटर एलो प्रयोगात्मक पशुओं के प्रजातियों पर विभिन्न उतक स्थलों में ट्यूमर पैदा करता है, जिनमें यकृत का कैंसर प्रमुख है। यह श्वसन नली में कैंसर पैदा करता है और डी0एन0ए0 अथवा प्रोटीन के साथ मिलकर genotoxic और mutagenic प्रभाव पैदा करता है।

सूडान-I और II नारंगी रंग के और सूडान-III एवं IV लाल रंग के पाउडर है जो कि मोम, तेल, पेट्रोल और पॉलिशों को रंगीन बनाने के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं। (चित्र-4)। कई दशक पूर्व इनका खाद्य पदार्थो में प्रयोग होता था पर अब इनका उपयोग कई देशों में प्रतिबंधित कर दिया गया है, क्योंकि आई.ए.आर.सी. ने इन चारों रंगों को ग्रुप III कैंसरकारी के रूप में घोषित कर दिया है। इस श्रेणी में उन पदार्थो को रखा गया है जिनमें मानव और प्रायोगिक पशुओं में कर्कटजननशीलता (Carcinogenicity) के सबूत अपर्याप्त या सीमित है। प्रायोगिक पशुओं और मानव में एक प्रोटीन cytochrome P 450 के बीच तुलना करने पर यह पाया गया कि पशुओं के Carcinogenicity आँकड़ों को मनुष्य के लिए extrapolate किया जा सकता है। इन प्रयोगों के आधार पर European Union ने इसका खाद्य उत्पादों में प्रयोग को प्रतिबंधित कर दिया है। सूडान-II, सूडान-I का dimethyl व्युत्पन्न (derivative) है जो कि चुहियों में मूत्राशय का कैंसर उत्पन्न करता है।

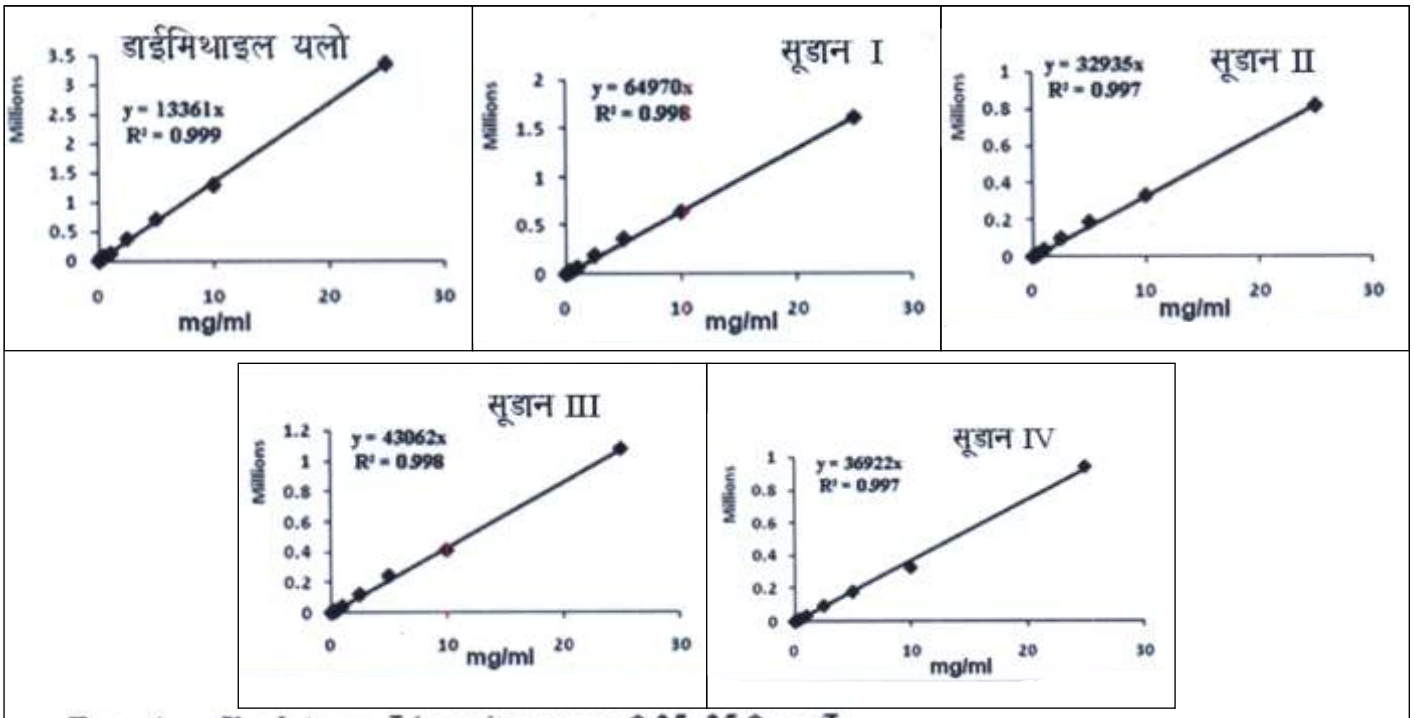

Equation: $Y = b + mx$. Linearity range: 0.25–25.0 mg/L.

चित्र-2: पॉच गैर अनुमत रंगों का Calibration curve

सारांश :-

बाजार में ढाबे में बिकने वाले ज्यादातर खाद्य उत्पादों में सस्ते तेल और खुली मिर्च पाउडर का प्रयोग होता है। बटर एलो या डाईमिथाइल यलो तेल में मिलावट के रूप में और सूडान डाइज लाल मिर्च पाउडर में मिलावट के रूप में प्रयोग होता है। सालन या करी को आकर्षित बनाने हेतु अधिक मात्रा में मिर्चा और तेल का प्रयोग किया जाता है, फलस्वरूप करी नमूनों में बटर एलो और सुडान-I की मिलावट पाई जाती है। इन एजो डाइज का इतनी अधिक मात्रा में खाद्य उत्पादो में पाया जाना मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत बडा खतरा उत्पन्न कर सकता है, क्योंकि यह कैंसर जैसे रोग उत्पन्न करने में सक्षम है। इसलिए इन उत्पादों की निरन्तर जाँच होनी चाहिए जिससे हमारे देश की जनता स्वस्थ रहे।

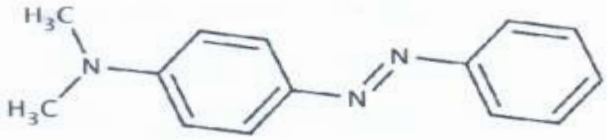

चित्र-3: डाईमिथाइल यलो का रसायनिक सूत्र

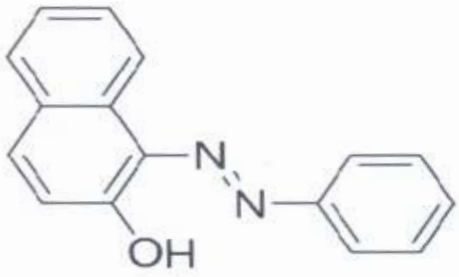

सूडान - I

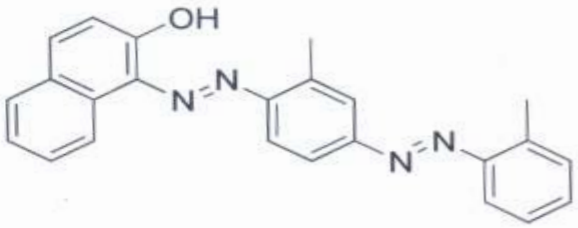

सूडान - II

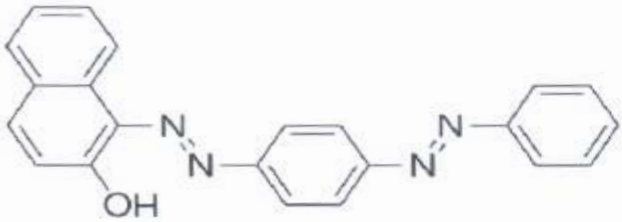

सूडान - III

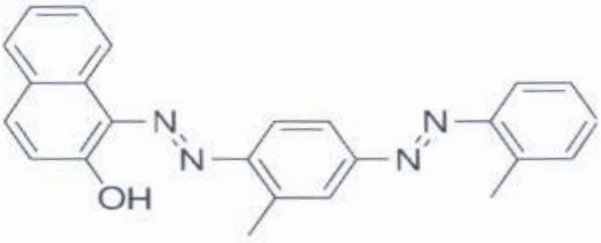

सूडान - IV

चित्र-4: सूडान डाइज के रसायनिक सूत्र

कृत्रिम मिठास: एक मीठा जहर

रूपिन्द्र कुमारी, डा. देवेन्द्र कुमार पटेल, डा. नसरीन गाजी अंसारी

विश्लेषणात्मक रसायन विभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

यदि कोई आपको तारकोल खाने के लिए कहता है तो क्या आप इसे मुस्कुराते हुए खुशी से अपने नाश्ते, सुबह उबले अनाज एवं दालों पर छिडक कर खाना पसंद करेंगें।

शायद आप ऐसा बिल्कुल नही करेंगें, आखिरकार आप नासमझ तो है नहीं, जो जानबूझकर तारकोल जैसे विषैले पदार्थ का सेवन करेंगें। परन्तु अगर मैं कहूं कि यह बहुत मीठा है?सच में बहुत मीठा, चीनी से लगभग 350 गुना ज्यादा मीठा। तब आप क्या कहेंगें? इससे पहले कि आप एक जोरदार जवाब दें 'नहीं', इस पर विचार करें कि आप न केवल इस रहस्यमय कोयला व्युत्पन्न मीठे तत्व को खाते और पीते ही हैं बल्कि आजकल यह विश्व के लगभग सभी रेस्तरां की भोजन तालिका का गौरव है इतना ही नहीं यह मीठा यौगिक पेय पदार्थ, चॉकलेट, कैंडीज, कुकीज, बिस्कुट, दवाओं एवं दंतमंजन जैसे अनेक प्रकार के उत्पादों में प्रयोग किया जाता है। इस कोयला व्युत्पन्न मीठे यौगिक का नाम 'सैकरिन' है। यह तत्व 1878 में पहली बार जॉन होपकिन्स विश्वविद्यालय के एक रासायनिज्ञ 'कान्सटेनटीन फेहिलबर्ग' द्वारा तारकोल के डेरिवेटिव पर कार्य करते हुए बनाया गया।

सैकरिन शब्द का अर्थ है, चीनी से संबंधित या चीनी जैसा। सैकरिन बहुत लम्बे समय से, मीठा वर्जित मरीजों को चीनी के स्थान पर प्रयोग करने का एक विकल्प है। सैकेरिन एक कृत्रिम सफेद क्रिस्टलीय पाउडर है जो अपनी वास्तविक स्थिति में सुकरोज से 350 गुना ज्यादा मीठा होता है। सैकरिन का पोषण में कोई महत्व नही है।

अधिकारिक तौर पर सैकेरिन को मार्च 1971 में 'कैंसरजन' घोषित किया गया जब कनाडा में एक शोध के दौरान नर जानवरों (रोडैन्ट) के मूत्राशय में सैकरिन के प्रभाव से ट्यूमर में अतिरिक्त बढोत्तरी देखी गई।

अमेरिका के राष्ट्रीय विषविज्ञान कार्यक्रम के द्वारा सैकेरिन को कैंसर उत्पन्न करने वाले यौगिकों की सूची में नामांकित किया गया - सैकेरिन औपचारिक रूप से 'प्रत्याशित मानव कैंसरजन' घोषित। सैकेरिन गरम करने पर अस्थिर बन जाता है परन्तु यह रासायनिक रूप से अन्य खाद्य पदार्थो के साथ प्रतिक्रिया नही करता। वास्तविक रूप में सैकेरिन को अच्छी तरह संग्रहीत किया जा सकता है। अन्य मीठे तत्वों के मिश्रण में सैकेरिन का प्रयोग प्रायः उनकी कमजोरियॉ एवं दोषों की क्षतिपूर्ति करने के लिए किया जाता है। सैकेरिन मधुमेह के रोगियों के लिए एक महत्वपूर्ण खोज माना जाता है कि चूंकि यह सीधे मानव पाचन तंत्र के माध्यम से अवशोषित हो जाता हैं। हालांकि सैकेरिन की कोई भोजन उर्जा नही है परन्तु एक अध्ययन द्वारा पता चला है कि सैकेरिन चूहों एवं मनुष्यों में इंसुलिन हार्मोन की रिहाई उत्तेजित करने में सक्षम है।

अपने क्षार रूप में, सैकेरिन पानी में धुलनशील नही है। अतः आमतौर पर सैकेरिन का सोडियम साल्ट, जो कि पानी में अत्यधिक धुलनशील है, कृत्रिम मीठे या

स्वीटनर की तरह प्रयोग में लाया जाता है।

आजकल सैकेरिन सामान्यतः नाइट्रस एसिड, सल्फर डाईआक्साइड, क्लोरीन एवं अमोनिया के साथ अन्थरानिलिक एसिड के संयोजन से निर्मित किया जाता है। जी हाँ, यह सत्य है - क्लोरीन, अमोनिया एवं अन्य क्षार तत्वों का मिश्रण है 'सैकेरिन'।

वास्तव में यह मिश्रण 'स्वीटनर' कम और घर की सफाई का नुस्खा ज्यादा लगता है। फिर भी इस बात से अंजान हर वर्ष लाखों-करोडों लोग सैकेरिन का प्रतिदिन सेवन करते है। सन् 1907 में , अमेरिका ने शुद्व खाद्य एवं औषधि अधिनियम (एफ0डी0ए0 एक्ट) के तहत, सैकेरिन का विशेष रूप से उन्मूलन करना शुरू किया। इस अध्ययन के दौरान यू0एस0डी0ए0 के रसायन विभाग ब्यूरो के निदेशक 'श्रीमान हारवे विले' ने महसूस किया कि सैकेरिन को खाद्य पदार्थो में प्रयोग नही करना चाहिए। उन्होंने स्पष्ट किया कि 'सैकेरिनः एक तारकोल व्युत्पन्न तत्व पूर्णतया खाद्य मूल्य रहित है और साथ ही स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है।'

वस्तुतः इसके बाद यू0एस0डी0ए0 और एफ0डी0ए0 अपने कथन बदलते रहे। सन् 1911 में, उन्होने कहा कि सैकेरिन युक्त खाद्य पदार्थ 'मिलावटी' है फिर 1912 में कहा 'सैकेरिन हानिकारक नही है'।

सन् 1948-49 तक, सैकेरिन से उत्पन्न खतरों पर ज्यादा चर्चा होती थी। सन् 1969 में सैकेरिन से उत्पन्न स्वास्थ्य संबंधित खतरों के लिए वैज्ञानिक सबूत प्रकाशन में आए। जिसके चलते, सन् 1972 में एफ0डी0ए0 ने सैकेरिन के प्रयोग पर प्रतिबंध लगाने की कोशिश की। लेकिन वे ऐसा करने में विफल रहे चूंकि प्रतिदिन लाखों-करोडों लोगों द्वारा सैकेरिन का सेवन किया जाता था। सैकेरिन से संबंधित चिंताओं का एफ0डी0ए0 के लिए प्रमुख कारण यह था कि सन् 1970 में शोधकर्ताओं ने चूहों पर सैकेरिन के प्रभाव के परीक्षण के दौरान पाया कि चूहे मूत्राशय कैंसर से ग्रसित हो रहे थे। एवं 1958 में, कांग्रेस द्वारा खाद्य, औषधि एवं प्रसाधन सामग्री अधिनियम में एक खंड जोडा गया था कि 'उन यौगिकों के उपयोग पर प्रतिबंध लगाना अनिवार्य है जिनमें मानव एवं जानवरों में कैंसर प्रेरित करने की क्षमता है।' लेकिन इन सब के बावजूद, एफ0डी0ए0 द्वारा बाजार में सैकेरिन की बिक्री एवं खाद्य पदार्थो में इसके प्रयोग पर प्रतिबंध लगाने के स्थान पर केवल खाद्य सामग्री पर एक चेतावनी प्रलेखन (लेबल) लगाया गया जिसमें उल्लेखित किया गया कि 'चूहों में मूत्राशय कैंसर उत्पन्न करने का कारक होने के कारण सैकेरिन युक्त खाद्य पदार्थो को उपभोग हांनिकारक है।' इसके बाद भी विवाद जारी रहा।

चेतावनी प्रतिलेख (warning label) हटाया -

सन् 2000 के अंत में, एफ0डी0ए0 द्वारा चेतावनी

प्रतिलेख हटवा दिये गये जो इस अध्ययन पर आधारित था कि 'चूहों का पाचन तंत्र मानवों के पाचन तंत्र से एकदम भिन्न है' एवं चूहों में मूत्राशय दीवारों की क्षति या मूत्राशय कैंसर उनके शरीर में ज्यादा पी0एच0 पर, अत्यधिक कैल्शियम फॉस्फेट एवं प्रोटीन की उपस्थिति में आदान प्रदान से सैकेरिन का अनेक संयोजक बना देते के कारण होता है। फिर भी 2010 तक सैकरीन को सभी कैंसरजन तत्वों की सूची में नामांकित किया गया, अमेरिकी स्वास्थ्य एवं मानव सेवा विभाग के राष्ट्रीय विष विज्ञान कार्यक्रम से लेकर ई0पी0ए0 के खतरनाक उत्पादों की सूची तक।

बडी एवं खतरनाक समस्याएं

सार्वजनिक हित विज्ञान केन्द्र द्वारा 1977 की एक रिपोर्ट में यह उल्लेखित किया गया कि सैकेरिन चूहों में मूत्राशय कैंसर ही नही बल्कि संवहनी एवं फेफडों का कैंसर भी प्रेरित करता है। इतना ही नही यह मादाओं में गर्भाशय कैंसर का खतरा भी बढा देता है। पूर्ण अध्ययन के बाद निष्कर्ष निकला कि सैकेरिन चूहों के लिए ही कैंसरजन है एवं सैकेरिन के सेवन एवं कैंसर का खतरा बढने में निश्चित संबंध है।

सर्वप्रथम राष्ट्रीय कैंसर संस्थान में यह उल्लेखित किया कि सन् 1973 से 1994 के दौरान कैंसर की घटनाओं में 10 प्रतिशत वृद्वि हुई (ध्यान रहे कि एफ0डी0ए0 ने सन् 1972 में सैकेरिन पर प्रतिबंध लगाने की कोशिश की थी)। लगभग 1900 से अधिक मामलों के एक विश्लेषण में पाया गया कि कृत्रिम मिठास का अधिक सेवन कैंसर का खतरा बढा देता है। एक दूसरे विश्लेषण में , कनाडा के 600 से अधिक सैकेरिन सेवन करने वाले पूरूषों में कैंसर का खतरा बढा पाया गया जो कि या तो अधिक कृत्रिम मिठास को सेवन करते थे या लम्बे समय से सेवन कर रहे थे। यह भी पाया गया कि अग्रेंज महिलाएं जो, कृत्रिम मिठास (सैकेरिन) के प्रतिदिन दस से अधिक गोलियों को सेवन करती थी, उनमें भी कैंसर का उच्च खतरा पाया गया था।

अन्य तथ्य-

यह जान लेना भी सभी के लिए आवश्यक है कि सैकेरिन के सेवन से बहुत प्रकार की प्रत्यूर्जता (एलर्जी) जैसे सिरदर्द, श्वास बिमारियां, त्वचा पर चकत्ते एवं दस्त वगैरह हो सकता हैं। इतना ही नही यह मीठा जहर नवजात शिशुओं के लिए बने खाद्य पदाथों में भी डाला जाता है।

मधुमेह ग्रसित लोगों की भूख पर सन् 2008 में अध्ययन से यह पता चला है कि सैकेरिन के केवल उत्तेजना मात्र से प्लाज्मा (खून) में इंसुलिन की मात्रा में एकाएक वृद्वि हो जाती है। जैसा कि हम सभी जानते है कि इंसुलिन के स्तर में परिवर्तन (वृद्वि या कमी) मोटापे एवं मधुमेह का मुख्य कारक है। आश्चर्य होता है यह जानकर कि एक घातक मीठा यौगिक जो

हजारों खाद्य उत्पादों में प्रयोग किया जाता है और एफ0डी0ए0 द्वारा फिर भी 'सुरक्षित' समझाया जाता है जबकि इससे संबंधित स्वास्थ्य जोखिम एवं चिंताए स्पष्ट रूप से उल्लेखित की गयी हैं। एलर्जी से लेकर इंसुलिन वृद्वि एवं कैंसर वृद्वि तक, सैकेरिन में कुछ भी प्राकृतिक नहीं है।

अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन, जनता के दबाव का सामना करने से डर रही है परन्तु यह अत्यन्त अनिवार्य है कि कृत्रिम मिठास (सैकेरिन) के खाद्य पदार्थो में उपयोग करने पर प्रतिबंध लगाया जाए या इसके द्वारा होने वाली स्वास्थ्य चिंताओं का पूर्ण चेतावनी प्रतिलेख उत्पादों पर लगाया जाए।

आजकल अक्सर सैकेरिन, कार्बोनेटेड शीतल पेय में असपारटेम के साथ इस्तेमाल में लाया जाता है ताकि फव्वारा पेय (Fountain Syrup) में असपारटेम (Aspartame कृत्रिम मिठास) के उडने के बाद भी मिठास बनी रहे। इस विषय पर भी सन् 2007 में एक चिकित्सा समीक्षा ने निष्कर्ष निकाला कि 'मौजूदा वैज्ञानिक सबूतों का वजन इंगित करता है कि असपारटेम उपभोग के मौजूदा स्तर पर एक गैर-पोषक स्वीटनर के रूप में सुरक्षित है'। इसके उत्पाद पर (breakdown products) फिनाईलएलेनिन है, इसलिए फिनाईलकिटोन्यूरिया (Phenylketonuria PKU) आनुवांशिक स्थिति के लोगों को असपारटेम का सेवन वर्जित करना चाहिये। असपारटेम, असपारटिक एसिड/फिनायल एलेनीन डाई पेप्टाइड का एक मिथाईल एस्टर है। असपारटेम की खोज, सन् 1965 में जी0डी0 सर्ल एवं कंपनी (G.D. Searle & Company) में कार्यरत एक रासायनिज्ञ जेम्स एम0 स्लैटर (James M. Schlatter) ने की। असपारटेम पहली बार ब्रांड नाम न्यूटरास्वीट (Nutrasweet) के तहत बेचा गया था। सन् 2009 के बाद यह ब्रांड नाम एमीनोस्वीट (Aminos - weet) के तहत बेचा गया।

सन् 1974 में अमेरिकी खाद्य पदार्थ एवं औषधि प्रशासन एफ0डी0ए0 द्वारा खाद्य पदार्थों में असपारटेम (Aspartame) के इस्तेमाल की मंजूरी देने के बाद से ही, असपारटेम की सुरक्षा राजनीतिक एवं चिकित्सा विवादों, कांग्रेस की सुनवाई एवं अंतरमाल चर्चाओं (Internet hoaxes) का मुख्य विषय बना हुआ था। सन् 1981 में असपारटेम ने सूखे खाद्य पदार्थो में इस्तेमाल करने के लिए अनुमोदन प्राप्त किया एवं सन् 1985 में कार्बोनेटेड शीतल पेय में एक स्वीटनर की तरह प्रयोग करने की अनुमति प्राप्त की।

शोधकर्ता एलेक्स कान्सटानटीन (Alex Constantine) द्वारा किए गये उल्लेख 'मीठा जहर' में सूचित किया गया कि 'असपारटेम' से 75 प्रतिशत से भी ज्यादा प्रतिकूल खाद्य प्रतिक्रियाएं (Neurological Function) हो सकती है। मुख्य रूप से यह उल्लेखित किया गया था कि असपारटेम में मानव के स्नायविक प्रतिक्रयाओं को कुप्रभावित करने की क्षमता है। डा0 ओलनी (Dr. Olney) एक प्रमुख न्यूरोसाइनटिस्ट ने पाया कि असपारटेट ओर ग्लूटामेट, दो मुख्य यौगिक है जो शरीर द्वारा मस्तिष्क के न्यूरॉन (कोशिकओं) के बीच जानकारी हस्तांतरित करते है परन्तु इन तत्वों की शरीर में अधिकता मस्तिष्क की कोशिकाओं को नष्ट कर सकती है। इस स्नायविक नुकसान का कारक होने के कारण, डा0 ओलनी ने असपारटेट एवं ग्लूटामेट युक्त उत्पादों पर 'उत्तेजक विष' (excitatoxin)

तालिका - विभिन्न रसायनों की चीनी की तुलना में मिठास

jlk;u dk uke	phuh dh ryuk e feBkl
phuh ¼lØkt½	1-0
Mh&Xydkt	0-46
yDVkt	0-68
Mh&QDVkt	0-84
lkbDykeV	30
,LikjVe	200
ldfju	300
lØykt	650
vfyVke	2000
FkkmefVu	3000
dkjyke	1]60]000
cjukjMe	2]00]000
lØkukuV	2]00]000
yxMuke	2]20]000

प्रलेखित करने का सुझाव दिया जिसका अर्थ है 'असपारटेट एवं ग्लूटामेट मस्तिष्क कोशिकाओं के लिए नाशकारी है।'

असपारटेम विषाक्तता के स्वास्थ्य संबंधित कुप्रभावों के अंतर्गतः आक्षेप (Fits), एकाधिक काठिन्य (Convulsion), अलजाईमर रोग (Alzheimer's disease), स्मृति हानि (Memory Loss), सुनने की शक्ति खत्म होना (Hearing Loss), हार्मोन संबंधित समस्याएं, मिरगी, पार्किसंस रोग, एड्स मनोभ्रंश, मस्तिष्क घाव एवं अन्य मस्तिष्क विकार शमिल है। डा0 यूसुफ मेरकोला (Dr. Yusuf Mercola), पोषण एवं स्वास्थ्य शोधकर्ता, असपारटेम के स्वीटन के तौर पर प्रयोग करने के कट्टर विरोधी ने सन् 1991 में राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान में एक शोध के बाद असपारटेम का इस्तेमाल न करने के लिए, इसके 167 लक्षणों एवं कारणों को सूचीबद्व किया। परन्तु आज भी इसका लाखों अमेरिकी डॉलर का व्यापार होता है तथा लाखों करोंडों लोग इसका सेवन करते है।

किसी पदार्थ के मीठापन जानने के लिए मानक रखे गये है जिनमें चीनी (सुक्रोज) को माना गया है, इसकी तुलना में विभिन्न रसायनिक पदार्थों के मीठेपन की तुलना तालिका में दी जा रही है। इस तालिका से ज्ञात होता है कि कई रसायन चीनी की तुलना में लाखों गुना अधिक मीठे होते है पर इनका उपयोग भोज्य पदार्थो में कितने सुरक्षित होते है इस पर लगातार शोध करने की आावश्यकता है।

अंत में यह कहा जा सकता है कि भविष्य में कृत्रिम मिठास वाली वस्तुओं/रसायनों से यथासम्भव परहेज किया जाय। अगर अति आवश्यक हो तभी इनका प्रयोग सीमित रखा जाये ताकि इनका शरीर पर कोई कुप्रभाव न पडे।

★★★

''परिसंकटमय औद्योगिक अपशिष्ट एवं प्रबंधन: भारतीय दृष्टिकोण''

डा. वीरेन्द्र मिश्र

पूर्व मुख्य वैज्ञानिक, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

प्रस्तावना

आधुनिक युग, औद्योगिक क्रान्ति का युग है, क्योंकि किसी भी देश के सतत् विकास में औद्योगीकरण की विशेष भूमिका है। औद्योगिक प्रगति भारत जैसे विकासशील देश की अनिवार्यता है। औद्योगिक इकाईयों से उपयोगी वस्तुओं के उत्पादन के साथ-साथ कुछ ठोस परिसंकटमय अपशिष्ट भी निकले है। इन ठोस परिसंकटमय अपशिष्टों में बहुत सारी धातुएं एवं प्रदूषक पदार्थ उपस्थित होते हैं। उदाहरण के तौर पर यदि हम स्टील उद्योग को लें, तो देखते है कि यदि 1 मिलियन टन स्टील का उत्पादन हो तो करीब 18 लाख टन ठोस अपशिष्ट का निस्तारण होता हैं। बहुत से उद्योगपति इन ठोस परिसंकटमय अपशिष्टों का निपटारा सही- सुनियोजित एवं वैज्ञानिक ढंग से नही करते जिसके परिणामस्वरूप वातावरण प्रदूषित होता है। यह ठोस परिसंकटमय अपशिष्ट हमारी मिट्टी (मृदा), वायु तथा पानी (सतहीय, भूमिगत) को संदूषित कर देते है तथा हमारे स्वास्थ्य पर इनका प्रतिकूल प्रभाव पडता है। विभिन्न उद्योगों द्वारा उत्पादित परिसंकटमय अपशिष्ट को तालिका 1 में तथा उत्तर प्रदेश में परिसंकटमय औद्योगिक अपशिष्ट उत्पन्न करने वाली इकाईयों की संख्या एवं उनके द्वारा उत्पन्न अपशिष्टों की मात्रा को क्रमशः तालिका 2 और 3 में दर्शाया गया है।

अपशिष्टों का पर्यावरण में प्रवेश

ये परिसंकटमय अपशिष्ट पर्यावरण में निम्न प्रकार प्रवेश पाते है:-

- परिसंकटमय अपशिष्टों का मृदा, पानी तथा वायु में मनुष्य के क्रिया-कलापों द्वारा मिल जाने पर।
- एकत्रित अपशिष्ट के वाष्पन का सुव्यवस्थित ढंग से निस्तारण न होने के कारण तथा तीव्र वायु के चलने से।
- एकत्रित अपशिष्ट का भूमिगत जल, झरनों तथा सरोवरों में रिसाव से।
- भूमिगत भंडारण के रिसाव से।
- एकत्रित अपशिष्टों में अग्नि तथा विस्फोट से।

आज इस परिसंकटमय औद्योगिक अपशिष्ट का प्रबंधन एक मुख्य समस्या बन गयी है। प्रस्तुत लेख में हम इन परिसंकटमय औद्योगिक अपशिष्टों के प्रकार तथा उनके प्रबंधन के संबंध में वर्णन करेंगे।

परिसंकटमय अपशिष्टों का वर्गीकरण

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने औद्योगिक परिसंकटमय अपशिष्टों को 18 वर्गो में विभाजित किया है। (तालिका - 4)

अपशिष्ट के पर्यावरण में स्थानान्तरण में सहायता करने वाले कारक

1. अपशिष्ट का भौतिक एवं रचनात्मक स्वरूप
2. परिसंकटमय अपशिष्ट की मात्रा
3. स्थान की स्थानीय स्थिति, जैसे वातावरण का तापमान, मिट्टी का प्रकार, मिट्टी में नमी की मात्रा, भूमिगत जल स्तर की स्थिति, आद्रता, प्रकाश, वायुवेग इत्यादि।
4. पानी में विलेयता
5. जल-अपघटन
6. वाष्प दाब
7. प्रकाश अपघटन
8. उत्पाद / पदार्थ का अर्द्ध-जीवन समय

परिसंकटमय अपशिष्ट का प्रबंधन

एक प्ररूपी (टिपिकल) परिसंकटमय अपशिष्ट का प्रबंधन तंत्र जिसमें अपशिष्ट का संकलन (collection), यातायात (transport), उपचार (treatment) और निस्तारण (sidposal) सन्निहित है चित्र 1 में दर्शाया गया है। परिसंकटमय अपशिष्टों का योजनाबद्व तरीके से प्रबंधन के लिए बहुत से मॉडल (आदर्श) उत्पादित अपशिष्ट की मात्रा एवं गुणों को ध्यान में रखते हुए विकसित किये गये है। परन्तु ये मॉडल सभी तकनीकी सहायता मानदंड (Technical feasibility criteria) को नही दर्शाते है। तकनीकी सहायता मानदंड का एक उदाहरण भिन्न प्रकार के अपशिष्टों के मध्य सामंजस्य है। अपशिष्ट के प्रकार एवं परिसंकटमय कार्यदक्षता तथा उनका सामंजस्य, तालिका 5 (अ) और 5 (ब) में दी गई है।

दो भिन्न प्रकार के अपशिष्ट अगर उनमें सामंजस्य नहीं है तो उन्हे एक साथ रखा नहीं जा सकता तथा एक ही तकनीक से उनका उपचार नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार के अपशिष्ट को एक साथ मिलने पर आग पकड सकती है, विस्फोट हो सकता है, ज्वलनशील विषालु गैसें पैदा हो सकती है और अधिक मात्रा में उष्मा पैदा हो सकती है।

अतः सुनियोजित ढंग से परिसंकटमय अपशिष्टों के प्रबंधन के लिए जो आवश्यकताएं हैं उन्हें तालिका नं0 6 में दर्शाया गया है।

ठोस परिसंकटमय अपशिष्ट के प्रबंधन के तीन मुख्य आयाम है-

1. ठोस परिसंकटमय अपशिष्ट का भण्डारण
2. विसर्जन स्थल का चुनाव तथा ठोस परिसंकटमय अपशिष्ट को विसर्जन स्थल तक ले जाने का साधन तथा मार्ग
3. अपशिष्ट को नियंत्रित तरीके से उपयुक्त विधि द्वारा उसमें उपस्थित पदार्थो के आपस में सामंजस्य को देखते हुए उनका विन्यास या निस्पादन

ठोस अपशिष्ट का भन्डारण करते समय यह ध्यान रखना चहिए कि इसके भण्डारण से वातावरण कम से कम प्रभावित हों। अपशिष्ट को निस्तारण के योग्य बनाने के लिए निम्न तैयारियां की जाती हैः-

(क) अचलीकरण (इममोबिलाइजेशन):- इसके

अंतर्गत भौतिक तथा रासायनिक क्रियायें आती हैं जो अपशिष्ट के सतहीय क्षेत्रफल को कम करती है, जिससे जल रिसाव कम हो जाता है, साथ ही साथ भूमिगत संदूषण की सम्भावना भी क्षीण हो जाती है।

(ख) स्थायीकरण (स्टेबिलाइजेशन):- इस क्रिया द्वारा अपशिष्ट के मूल रूप को भौतिक तथा रासायनिक क्रियाओं द्वारा अधिक स्थिर बना दिया जाता है। यह क्रिया अपशिष्ट को पृथ्वी हेतु निस्तारण में प्रयुक्त होती है।

(ग) स्थिरीकरण (फिक्सेशन):- यह वह क्रिया है जिसमें अपशिष्ट पदार्थ की गति अवरूद्व हो जाती है तथा वह कम विषालु हो जाता है।

(घ) पिण्डन (सालिडीफिकेशन):- इसमें अपशिष्ट की रासायनिक क्रिया सालिडीफिकेशन अभिकारकों के साथ होती है।

परिसंकटमय अपशिष्ट पदार्थो के विन्यास (निस्ता रण) के स्थल के संदर्भ में मुख्य बातें:-

1. भौतिक आकार

(अ) स्थलाकृति, स्थान वर्णन

(ब) भूमि स्थिरता

(स) भूकम्पीय स्थिरता

(द) सतह की मिट्टी (मृदा)

(य) नदी, तालाब के जल तथा झरनें (सतहीय जल)

(र) वायु दिशा

2- **परिस्थिति आकार**

(अ) पेड-पौधे व जन्तु

(ब) संरक्षण - उपयोगिता

(स) प्राकृतिक - वास

3. उपयुक्त स्थल का आकार

(अ) विकास की संभावना या क्षमता

(ब) उपयुक्त स्थल का नामकरण (आवासीय/औद्योगिक)

(स) कृषि उपयोगिता

(द) परिवहन मार्ग

4. संभार तंत्र

(अ) प्रयोग करने वालों के लिए स्थान की निकटतम दूरी

(ब) आवागमन का रास्ता

(स) आवश्यक सेवाओं की उपलब्धता (जैसे चिकित्सा, अग्नि शमन सेवायें इत्यादि

(द) उपयुक्त निकटवर्ती भूमि/मंडलन

5. मानव उपयोगिता

(अ) भू-दृश्य

(ब) मनोरंजन

(स) ऐतिहासिक एवं पुरातत्वीय

(द) जनसंख्या घनत्व एवं स्वास्थ्य स्थिति

(य) रोजगार या नियोजन के अवसर

स्थल चयन करते समय ध्यान देने वाली मुख्य बातें:-

स्थल चयन करते समय दो मुख्य बिंदुओं पर ध्यान दिया जाता है। समंक के आधार पर परिसंकटमय अपशिष्ट के उपचार एवं निस्तारण के लिए स्थल का चयन एवं निस्तारण स्थल को पुनः सुरक्षित करने के लिए जो मापदंड है उसे क्रमशः तालिका 7 एवं 8 में दर्शाया गया है।

1. ग्राही संबंध

इसमें संबंधित कारकों को तालिका 7 एवं 8 में दर्शाया गया है-

500 मीटर के अंदर की आबादी

पीने के शुद्वजल के कुओं की निकटतम दूरी

निकट के रहने वालों के लिए स्थल का प्रयोग

दूरस्थ स्थान (आफ साइट) इमारत की निकटतम दूरी

आवागमन स्थल तक अपशिष्ट ले जाने का सही मार्ग

भूमि का प्रयोग किस लिए किया जा रहा है

पर्यावरण स्थिति

2- स्थानान्तरण संबंधित

संबंधित कारकों को तालिका 7 एवं 8 में दर्शाया गया है -

नदी, तालाब इत्यादि की निकटतम दूरी

भूमिगत जल की गहराई

संदूषण के प्रकार

मिट्टी की पारगम्यता

सुदृढ आधार की गहराई

भूक्षरण की संभावना

वायु प्रदूषण का जलवायु पर प्रभाव

भूकम्पीय क्रिया की संवेदनशीलता

औद्योगिक ठोस अपशिष्ट का निस्तारण

अपशिष्ट के निस्तारण का मुख्य उद्देश्य निम्न है-

स्वास्थ्य तथा वातावरण पर पडने वाले विपरीत प्रभाव को कम करना

निस्तारण इस प्रकार करना चाहिए कि सभी लोग (जनमानस) इसे स्वीकार करें।

ठोस अपशिष्ट के निस्तारण की दो मुख्य विधियाँ है-

1. भस्मन (इन्सीनरेशन)

2. भूभरण (लैन्डफिल्स)

भस्मन में ठोस अपशिष्ट की मात्रा को कम किया जाता है तथा उसके उपरान्त भूभरण द्वारा ठोस अपशिष्ट का निस्पादन कर दिया जाता है। अपशिष्टों का सेक्योरड भूभरण (Secured landfill) द्वारा किये गये निस्तारण से एक बहुत बडी पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न हो सकती है। इस विधि द्वारा निस्तारण से भूजल का संदूषण लीचेट के छनन के माध्यम से होने की संभावना हो

सकती है। इस प्रकार से भूजल के संदूषण करने के लिए यूएसईपीए (USEPA) ने एलसीआरएस (LCRS) डबुल लाइनरस एण्ड लीचेट कलेक्शन एण्ड रिमूवल सिस्टम के प्रयोग का सुझाव दिया है। इसमें जो लाइनर मैटिरियल का चुनाव रासायनिक समन्यवता, डयूरेबिल्टी, स्ट्रेस तथा स्ट्रेन गुणवत्ता पर आधारित रहता हैं। इसे चित्र 2 में दर्शाया गया है। सुरक्षित लैन्डफिल (Secured landfill) में निपटान से पहले परिसंकटमय अपशिष्ट के लिए संस्तुत मानदंड तालिका 9 में दिया गया है।

अपशिष्टों को उत्पत्ति स्थल से उपचार अथवा निपटान स्थ्ल तक ले जाने के लिए ऐसी गाडियों या वैन की व्यवस्था की जानी चाहिए, जिससे कार्यरत कर्मचारियों को उपयुक्त अपशिष्ट प्रबंधन पद्वति तथा नियमों के विषय में जानकारी दी जानी चाहिए। उपर्युक्त लाइनर सिस्टम को ध्यान में रखते हुए उ0प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने कुछ लैन्डफिल का निर्माण कराया है जो कानपुर में है जहाँ पर परिसंकटमय अपशिष्टों का निस्तारण हो रहा है। इसे चित्र नं0 3 में प्रदर्शित किया गया है।

ठोस अपशिष्ट के प्रबंधन के अन्य विकल्प

(अ) पुनः प्रयोग जैसे-

1-कोयले की राख (कोल ऐश) को 1200-14000 से0ग्रे0 तक गर्म करके तथा चूने से क्रिया कराने के बाद सीमेंट की तरह कांक्रीट बनाने में।

2. थर्मल पावर प्लान्ट से निकली हुई फ्लाई ऐश (उडन-राख) का उर्वरक के रूप में तथा ईंट बनाने में प्रयोग

3. टेनरी अपशिष्ट का चमडें के बोर्डस बनाने में

4. सुगरकेन अपशिष्ट से मोम बनाने में

(ब) पुनः चक्रण जैसे-

कुछ औद्योगिक ठोस अपशिष्ट का पुनः चक्रण करके अधिक मात्रा में स्टील, एल्यूमिनियम तथा ताँबा इत्यादि बनाया जा सकता है।

भारत में अपशिष्ट प्रबंधन की वर्तमान स्थिति

भारत में ठोस अपशिष्ट का निस्तारण एक बहुत बहुत बडी समस्या है। पर्यावरण की गुणवत्ता बनाये रखना आज की सबसे बडी आवश्यकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि परिसंकटमय अपशिष्ट के निस्तारण की व्यवस्था इस तरह से नियंत्रित की जाए कि वह न केवल पर्यावरण की दृष्टि से ही सुरक्षित हो अपितु स्वास्थ्य की दृष्टि से भी सहायक हो।

अभी तक इन परिसंकटमय अपशिष्ट पदार्थो को अव्यवस्थित ढंग से इधर-उधर कही भी एकत्रित कर दिया जाता था तथा इसके प्रदूषण से लोगों को काफी परेशानियों का सामना करना पडता था। लोगों ने कानून के दरवाजें खटखटायें तथा विषय के महत्व को समझा गया। इस विषय के महत्व को देखते हुए भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने पर्यावरण सुरक्षा एक्ट 1986 के अंतर्गत परिसंकटमय अपशिष्ट के प्रबंधन तथा रखरखाव का 1989 में नियम बनाया तथा इसकी पूरी रूपरेखा 1991 में तैयार की गयी। ये नियम 2000 में फिर संशोधित किये गये है। इस

संशोधित नियम के अंतर्गत करीब 44 प्रक्रियायें तथा 138 अपशिष्ट पदार्थो से अधिक का परिसंकटमय घोषित किया गया है। इसके बाद बहुत सारे विनिमय (Regulations) लाये गये फिर भी ऐसा पाया गया कि इन नियमों तथा विनिमयों का सही ढंग से अनुपालन नहीं हो पा रहा है।

निष्कर्ष

अन्ततोगत्वा यह अनुभव किया गया कि बहुत सारे तकनीकी बिन्दु जो परिसंकटमय अपशिष्ट के उपचार तथा निस्तारण से संबंधित है उन्हें धारणीय या लगातार विकास (sustainable development) के लिए सशक्त (strengthen) करने की आवश्यकता है। यद्यपि बहुत सारे खर्चीले एवं उन्नति विधि परिसंकटमय अपशिष्ट के उपचार के लिए प्रयुक्त हो रहे है। फिर भी बहुत सारे परिसंकटमय अपशिष्ट के अवशेष रह जाते है। इन सब विधियों को ध्यान में रखते हुए अपशिष्ट निम्नीकरण तथा क्लीनअप का दृष्टिकोण सबसे उचित पाया गया जो आर्थिक दृष्टिकोण से अति उत्तम (कम खर्चीला तथा कम समय लेने वाला) है। आज बहुत सारे

तालिका - 9
उद्योग तथा उनके द्वारा उत्पादित परिसंकटमय अपशिष्ट

उद्योग	परिसंकटमय अपशिष्ट
प्लास्टिक	आर्गेनिक क्लोरीन कम्पाउन्डस
पेस्टीसाइडस	आर्गेनिक क्लोरीन कम्पाउन्डस आर्गेनिक फास्फेट कम्पाउन्डस
दवाईयां	आर्गेनिक साल्वेन्टस एवं अवशेष, भारी धातुएं जैसे मरकरी और जिंक
पेन्टस	भारी धातुएं, पिग्मेन्टस, साल्वेन्टस, आर्गेनिक
आयल, गैसोलीन एवं दूसरे पेट्रोलियम प्रोडक्टस	आयल, फिनाल्स और दूसरे आर्गेनिक कम्पाउन्डस, भारी धातुएं, अमोनिया, साल्टस, एसिडस, कास्टिक्स
धातुएं	भारी धातुएं, फ्लोराइड्स, सायनाइडस, एसिड और एल्कलाइन क्लीनर्स, साल्वेन्टस, पिगमेन्टस, एब्रेसिव प्लेटिंग साल्टस, आयल, फिनाल्स
लेदर	भारी धातुएं, आर्गेनिक, साल्वेन्ट
टेक्सटाइलस	भारी धातुएं, डाईज, आर्गेनिक क्लोरीन, कम्पाउन्डस, साल्वेन्ट

स्रोतः हाउसहोल्ड वेस्ट एण्ड देयर जनरेशन ऑफ हैजारडस सब्सटेन्सेज (यूएसईपीए, 1980)

औद्योगिक देश क्लीन अप टेक्नोलॉजी का प्रयोग कर रहे है। जिसके अन्तर्गत उन्होंने प्रोसेस तथा रा-मैटेरियल दोनों को परिवर्तित कर दिया है। ऐसे देशों में काफी योग्य लोगों की आवश्यकता है जो ऐसी टेक्नोलॉजीज (तकनीकों) का संचालन कर सकें तथा उनकी मानिटरिंग कर सके। आज भारत वर्ष में बहुत सारी औद्योगिक ईकाईयाँ है जो अपशिष्ट उत्पन्न करती है। इनमें से कुछ औद्योगिक ईकाइयों में अपशिष्ट उपचार एवं निस्तारण की व्यवस्था है। जिन ईकाइयों में यह सुविधा नहीं है वे ईकाइयाँ इन परिसंकटमय अपशिष्टों को एकत्रित करके उन एजेन्सीज को उपचार एवं निस्तारण के लिए सौंप देते है। जो वहाँ के राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से निस्तारण के लिए अधिकृत होती है।

तालिका - 2
परिसंकटमय औद्योगिक अपशिष्ट इकाईयों की उत्तर प्रदेश में स्थिति

क्रं.	औद्योगिक इकाईयां	संख्या
1	परिसंकटमय अपशिष्ट उत्पादन करने वाली इकाईयों की प्रदेश में संख्या	1915
2	परिसंकटमय अपशिष्ट उत्पादन करने वाली इकाईयां जो प्राधिकृत है।	1339
3	परिसंकटमय अपशिष्ट उत्पादन करने वाली इकाईयां जिनका प्राधिकार विचारणीय हैं	283
4	परिसंकटमय अपशिष्ट उत्पादन करने वाली इकाईयां जिन्होंने प्राधिकार के लिए आवेदन नही किया	86
5	परिसंकटमय अपशिष्ट उत्पादन करने वाली इकाईयां जिन्हें बंद करने के निर्देश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा अक्टूबर 2003 में दिये जा चुके है।	199
6	परिसंकटमय अपशिष्ट उत्पादन करने वाली इकाईयां जिन्हे बंद करने के निर्देश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा अक्टूबर 2003 से वापस लिए जा चुके है।	86
7	परिसंकटमय अपशिष्ट उत्पादन करने वाली इकाईयां जिन्हें अक्टूबर 2003 से प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा बंद कर दिया गया है।	113

तालिका - 3
परिसंकटमय अपशिष्टों का उत्तर प्रदेश में उत्पाद

क्रं0	अपशिष्ट	टन्स प्रति वर्ष
1	पुनः चक्रण योग्य	117887.366
2	भस्मन योग्य	15193.175
3	भूभरण योग्य	36111.275
	सम्पूर्ण अपशिष्ट उत्पाद	**169191.820**

तालिका - 4
खतरनाक अपशिष्टों का वर्गीकरण

अपशिष्ट का वर्ग	अपशिष्टों के प्रकार
1.	साइनाइड अपशिष्ट
2,3,4.	भारी धातु वाले अपशिष्ट
5.	हैलोजन रहित हाइड्रोकार्बन
6.	हैलोजन युक्त हाइड्रोकार्बन
7.	पेन्ट्स, पिगमेन्ट (कणिका), ग्लू वारनिश, प्रिटिंग इंक (छपाई की स्याही) से प्राप्त अपशिष्ट।
8.	रंजक (डाई) तथा रंजक मध्यवर्ती (डाई-इन्टरमीडिएट) जिसमें अकार्बनिक रसायन यौगिक भी सम्मिलित हैं, से प्राप्त अपशिष्ट
9.	रंजक (डाई) तथा रंजक मध्यवर्ती (डाई-इन्टरमीडिएट) जिसमें कार्बनिक रसायन यौगिक भी सम्मिलित हैं, से प्राप्त अपशिष्ट
10.	आयल या आयल इमल्शन से प्राप्त अपशिष्ट
11.	टैरी अपशिष्ट एवं टार अवशेष
12.	स्लज (आपंक) एवं भस्मक राख
13.	फिनॉल्स
14.	ऐस्बेस्टस
15.	पेस्टीसाइड तथा हर्बीसाइड (खरपतवार-नाशी) से प्राप्त अपशिष्ट
16.	अम्लीय/क्षारीय/स्लरी अपशिष्ट
17.	आफ स्पेसीफिकेशन एवं डिस्कार्डेड प्रोडक्टस
18.	अपशिष्ट पदार्थों के कन्टेनर्स एवं लाइनर्स

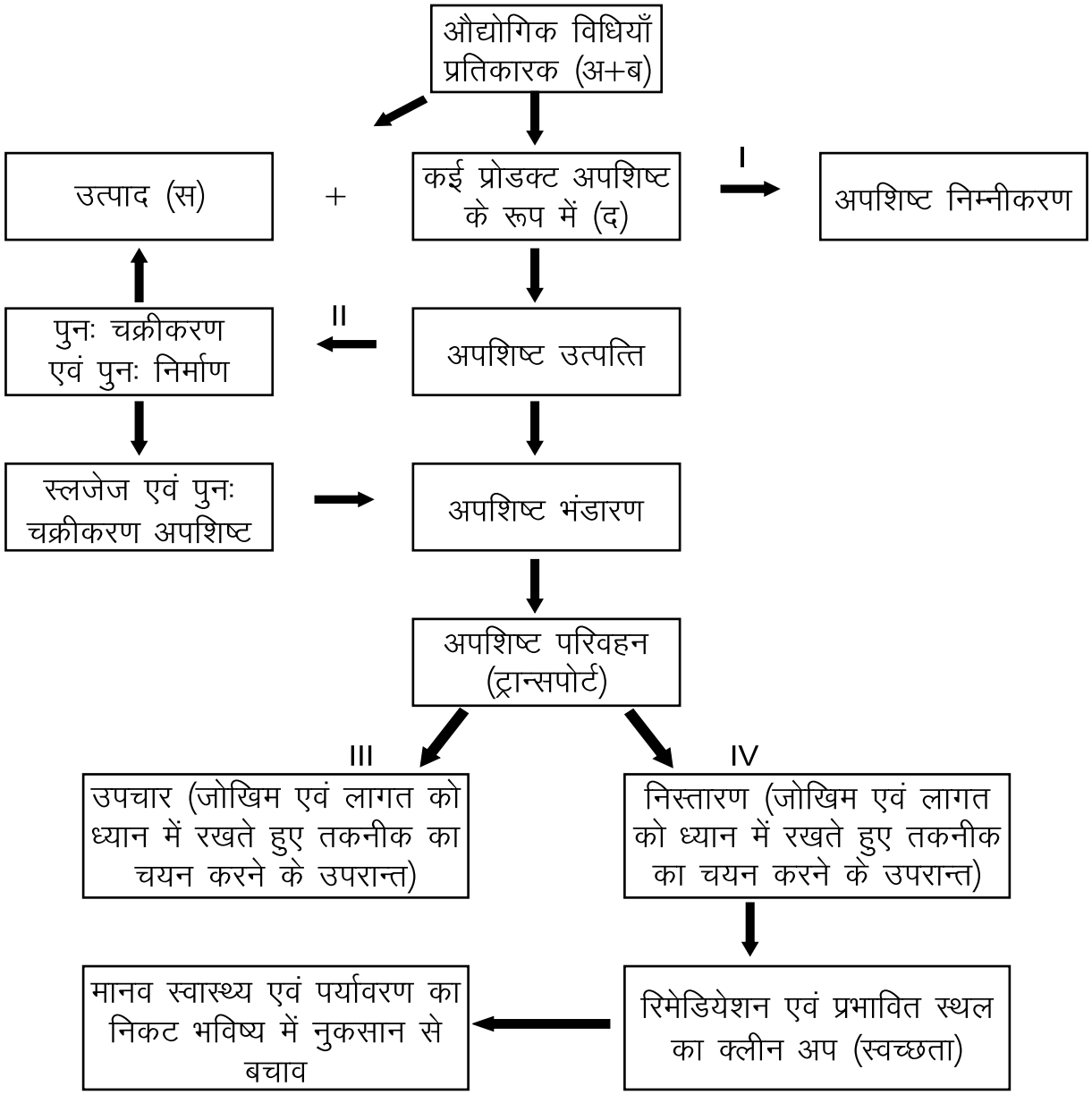

चित्र - 1 प्ररूपी (टिपिकल) परिसंकटमय अपशिष्ट का प्रबंधन तंत्र

तालिका 5 (अ)
अपशिष्ट की खतरनाक कार्यक्षमता

अपशिष्ट के प्रकार	खतरनाक कार्यक्षमता
मेटल प्लेटिंग अपशिष्ट	0.25
पेट्रोकेमिकल अपशिष्ट	0.30
पेस्टीसाइड अपशिष्ट	0.35
अपशिष्ट अवशेष	0.10

* एनालिटिक हाईआरकियल विधि (साटी, 1980) पर आधारित।

तालिका 5 (ब)
अपशिष्ट सामन्जस्य विवरण

अपशिष्ट के प्रकार	स्थिति
मेटल प्लेटिंग अपशिष्ट एवं पेट्रोकेमिकल अपशिष्ट	सामन्जस्य नहीं है।
मेटल प्लेटिंग अपशिष्ट एवं पेस्टीसाइड अपशिष्ट	सामन्जस्य है।
पेट्रोकेमिकल एवं पेस्टीसाइड अपशिष्ट	सामन्जस्य नहीं है।

तलिका - 6
सुनियोजित ढंग से परिसंकटमय अपशिष्टों के प्रबंधन में ध्यान देने योग्य

प्रकार्यात्मक आवश्यकताएं	स्वीकार्यता मानदंड	तकनीकी साध्यता मानदंड	परिशुद्वता मानदंड
योजना का ध्येय (दीर्घकालीन/अन्य कालीन)	योजना उस क्षेत्र में रहने वाले सभी लोगों तथा प्रशासनिक अधिकारियों को स्वीकार होनी चाहिए।	सभी प्रकार के अपशिष्ट के लिए उचित उपचार तकनीक होनी चाहिए।	लागत जोखिम का आंकलन (जिसके अन्तर्गत अपशिष्ट का संकलन, ट्रान्सपोर्टेशन, उपचार एवं निस्तारण की सम्पूर्ण लागत सम्मिलित हो)
उद्देश्य (न्यूनतक लागत, एवं/या न्यूनतम जोखिम)	योजना वित्तीय एजेन्सी एवं उस क्षेत्र के अपशिष्ट उत्पादकों को स्वीकार होनी चाहिए।	सामंजस्य अपशिष्ट उपचार तकनीक	उपचार एवं निस्तारण की लागत ऐसे मॉडल तथा तकनीक पर आधारित होनी चाहिए जो कम खर्च में ज्यादा क्षमता रखता है।
अपशिष्ट उत्पादन प्रतिरूप (प्रकार एवं मात्रा)		अपशिष्ट - अपशिष्ट सामन्जस्यता	
अपशिष्ट नियतन प्रतिरूप		अपशिष्ट अवशेष (अपशिष्ट उपचारित सुविधाओं से उत्पन्न)	
ट्रान्सपोर्टेशन		निस्तारण के लिए	
डपचार		उपचार/निस्तारण सुविधा, क्षमता सीमा।	
निस्तारण स्थल/ निस्तारण तकनीक एवं निस्तारण सुविधायें			

तलिका - 7
परिसंकटमय अपशिष्ट पदार्थो के उपचार एवं निस्तारण की सुविधा क लिए स्थल का चयन (समंक के आधार पर)

गुण संवर्ग	समंक (स्कोर)				
(एट्रीब्यूट कैटीगरी)	अधिकतम	स्थल 'अ'	स्थल 'ब'	स्थल 'स'	स्थल 'द'
ग्राही संबंधित	320	297	134	159	252
स्थानान्तरण संबंधित	280	246	106	250	227
अपशिष्ट के गुणों से संबंधित	220	155	110	179	185
अपशिष्ट प्रबंधन से संबंधित	180	80	82	118	146
सम्पूर्ण समंक (सम्पूर्ण स्कोर)	1000	778	432	706	810
श्रेणी खतरनाक स्थिति		उच्च	निम्न	मध्यम	अत्युच्च

नोटः- निस्तारण के लिए स्थल अ, ब, स, द की स्कोरिंग ग्राही संबंधी तथा स्थानान्तरण संबंधी कारकों को ध्यान में रखकर किया गया तथा कुल स्कोरिंग करने पर यह पाया गया कि इनकी वरीयता क्रम इस प्रकार है। स्थल ब, स्थल स, स्थल अ और स्थल द।

तलिका - 8

संख्या के आधार पर खतरनाक अपशिष्ट पदार्थो के निस्तारण स्थल को पुनः सुरक्षित रखना।

गुण संवर्ग	समंक (स्कोर)				
(एट्रीब्यूट कैटीगरी)	अधिकतम	स्थल 'अ'	स्थल 'ब'	स्थल 'स'	स्थल 'द'
ग्राही संबंधित	320	220	200	100	280
स्थानान्तरण संबंधित	280	200	180	220	127
अपशिष्ट के गुणों से संबंधित	220	150	100	60	155
अपशिष्ट प्रबंधन से संबंधित	180	100	100	90	156
सम्पूर्ण समंक (सम्पूर्ण स्कोर)	1000	670	580	370	828
श्रेणी		उच्च	निम्न	मध्यम	अत्युच्च

नोटः- निस्तारण पूर्ण होने के बाद स्थल अ, ब, स, द की स्कोरिंग ग्राही संबंधी तथा स्थानान्तरण संबंधी कारकों को ध्यान में रखकर किया गया तथा कुल स्कोरिंग करने पर यह पाया गया कि इनकी वरीयता क्रम इस प्रकार है। स्थल द, स्थल अ, स्थल ब और स्थल स।

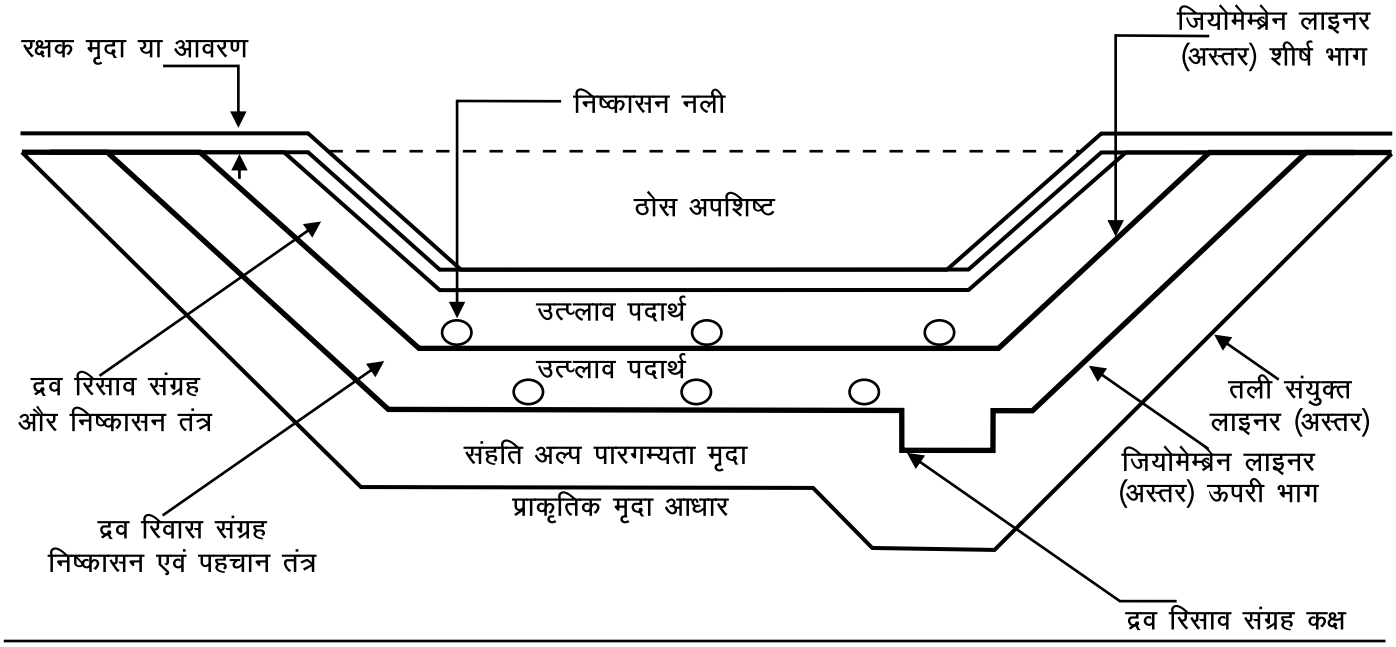

चित्रः- 2 सुरक्षित भू-भरण के लिए द्विस्तरीय द्रव रिसाव संग्रह प्रणाली (यूएसइपीए सुझाव पर आधारित)

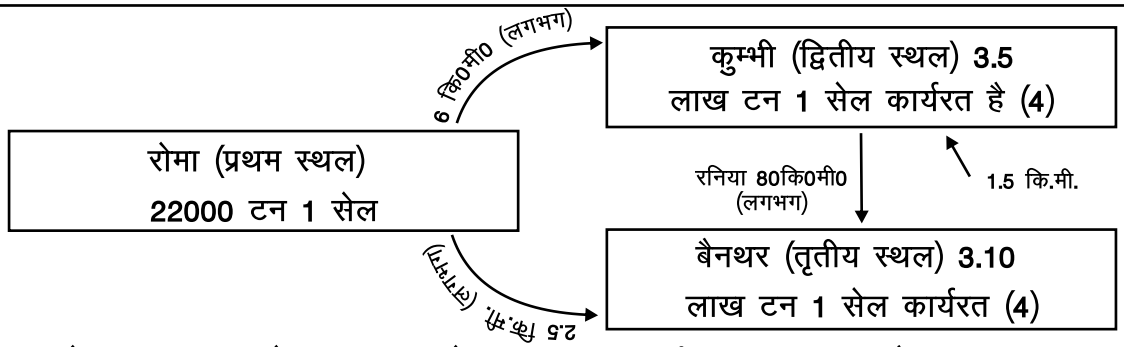

भंडारण क्षमता के आधार पर भरने का समयः- रोमा- 1 साल, कुम्भी- 10-15 साल, बैनथर- 10-15 साल

चित्रः- 3 परिसंकटमय औद्योगिक अपशिष्टों के उपचार भंडारण निस्तारण (टीएसडीएफ) के स्थल तथा उनकी भंडारण क्षमता।

तालिका - 9
सुरक्षित लैन्डफिल में निपटान से पहले परिसंकटमय अपशिष्ट के लिए संस्तुत मानदंड

लीचेट क्वालिटी	सान्द्रण
पी एच	4-13
चलकता	1000,000 एमएस / सीएम
कुल आर्गेनिक कार्बन (टी.ओ.सी)	< 200 मि0ग्रा0 / ली0
फिनाल्स्	< 100 मि0ग्रा0 / ली0
आर्सेनिक	< 1 मि0ग्रा0 / ली0
सीसा	< 2 मि0ग्रा0 / ली0
कैडमियम	< 2 मि0ग्रा0 / ली0
क्रोमियम - VI	< 0.5 मि0ग्रा0 / ली0
ताँबा	< 10 मि0ग्रा0 / ली0
निकल	< 3 मि0ग्रा0 / ली0
पारा (मरकरी)	< 0.1 मि0ग्रा0 / ली0
जिंक	< 10 मि0ग्रा0 / ली0
फ्लोराइड	< 50 मि0ग्रा0 / ली0
अमोनिया	< 1000 मि0ग्रा0 / ली0
क्लोराइड	< 10,000 मि0ग्रा0 / ली0
साइनाइड	< 2 मि0ग्रा0 / ली0
सल्फेट	< 5,000 मि0ग्रा0 / ली0
नाइट्रेट	< 30 मि0ग्रा0 / ली0
एब्सार्वेवुल आर्गनिक्स बाउन्ड क्लोरीन	< 1 मि0ग्रा0 / ली0
जल में घुलनशील कन्टेन्ट	< 10 %
एक्सियल डीफारमेशन	< 20 %
तेल एवं ग्रीज	< 10 डब्ल्यू टी %

★★★

''क्लोरीन किसी भी समय बन सकती है, घातक''

डा0 जी.सी. किस्कू, गीताञ्जलि जायसवाल, पोखराज साहू,

पर्यावरण अनुवीक्षण विभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

क्लोरीन एक सक्रिय गैस है। क्लोरीन तत्व आवर्त सरिणी के हैलोजन समूह (17) आवर्त (3) में स्थापित है। यह दूसरी सबसे हल्की हैलोजन गैस है जो कि क्लोरीन तत्व के बाद आती है। पुरातन काल से ही क्लोरीन के यौगिक को साधारणतया सोडियम क्लोराइड (नमक) के नाम से जाना जाता है। पहली बार सन् 1630 में क्लोरीन गैस को रासायनिक क्रिया में संश्लेषित किया गया पर तब इसे महत्वपूर्ण तत्व नहीं समझा गया। क्लोरीन गैस की खोज ''कार्ल विलियम शीले'' ने सन् 1774 में किया था। जिन्होंने इसे किसी नये तत्व का आक्साइड दर्शाया था। सन् 1809 में एक रसायनज्ञ ने बताया कि यह तत्व गैस अवस्था में हो सकता है तथा इसकी पुष्टी एवं नामांकन सर हम्फ्री डेवी ने 1810 में किया।

- नाभिकीय प्रतिक्रिया पहली श्रंखला अभिक्रिया नहीं है बल्कि इसकी खोज 1913 में गैस बोडेन्स्टे ने की जिन्होंने देखा कि क्लोरीन और हाइड्रोजन गैस का मिश्रण सूर्य के प्रकाश में उत्प्रेरित होकर श्रृंखला अभिक्रिया देता है। यह श्रंखला अभिक्रिया बाद में 1918 में वालथेर नन्स्ते के द्वारा विस्तारित की गई।
- क्लोरीन समुद्र में सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है। अगर समुद्र से क्लोरीन गैस बनने लगे तो वो पूरी धरती के वर्तमान वातावरण से 5 गुना ज्यादा होगी। समुद्र में सोडियम क्लोराइड के रूप में लगभग 2.6×10^{16} मैट्रिक टन क्लोरीन है।
- क्लोरीन समुद्र में ही नहीं बल्कि यह धरती के उपरी सतह में प्रचुर मात्रा में पाया जाने वाला 6$^{वां}$ तत्व है।
- कम मात्रा में क्लोरीन गैस का संपर्क कम से कम समय के लिए भी घातक हो सकता है। मतलब कि अगर वायु में 1000 हिस्से की क्लोरीन का 1 हिस्सा भी घातक है।
- क्लोरीन गैस हवा से भारी होती है। यह प्रथम विश्व युद्ध 1915 में पहली बार रासायनिक हथियार के रूप में जर्मन फौज तथा पश्चिमी अलीस के द्वारा प्रयोग में लाया गया।

परमाणु संख्या : 17 परमाणु भारः 35.453

गलनांकः 171.65 के (-101.5^{0}C या - 150.7^{0}F)

कथनांकः 239.11 के (-34.04^{0}C या - 29.27^{0}F)

घनत्वः 0.003214 ग्राम / क्यूबिक सेन्टीमीटर

विशिष्ट उष्माः 0.23 ग्राम कैलोरी / ग्राम / ^{0}C

सामान्य कक्ष तापमान अवस्थाः गैस

तत्व वर्गीकरणः अधातु

वर्ग संख्याः 17

आवर्त संख्याः 3

वर्ग नामः हैलोजन

वाष्पीकरण उष्मा: 68 ग्राम कैलोरी / ग्राम

संलयन उष्मा: 22 ग्राम कैलोरी / ग्राम

इलेक्ट्रानिक विन्यास: $1S^2, 2S^2, 2P^6, 3S^2, 3P^5$

इलेक्ट्रानिक बंधुता: 3.61 eV

विद्युत ऋणात्मकता: 3.0

परमाणु त्रिज्या: $0.99\ A^0$

क्लोरीन सक्रिय होने के कारण मुक्त अवस्था में नही पायी जाती है। संयुक्त अवस्था यह धातुओं के क्लोराइड के रूप में मिलती है जिनमें सोडियम क्लोराइड, मैग्नीशियम क्लोराइड और पोटेशियम क्लोराइड प्रमुख है। ये लवण मुख्यतः समुद्र या चट्टानों में पाये जाते है। क्लोरीन एक अध्रुवीय, द्विपरमाणुक अणु है जो कि धातु आयन के साथ प्रबल आयनिक बंध बनाता है।

क्लोरीन ज्वलनशील नही होता परन्तु ऑक्सीजन की तरह यह भी ज्वलनशील तत्वों के साथ क्रिया करके ज्वलनशीलता दर्शाती है। ये ज्वलनशील गैसे व कार्बन को छोडकर क्लोरीन, ईथर, तारपीन, ऐसिटिलीन, अमोनिया गैसें, ईधन गैसे, हाइड्रोजन, हाइड्रोकार्बन के साथ विस्फोटक क्रियायें करती है।

क्लोरीन यौगिक

ऑक्सीकरण अवस्था	नाम	सूत्र (फार्मूला)	यौगिक
-1	क्लोराइड्स	Cl^-	आयनिक क्लोराइड्स, कार्बनिक क्लोराइड्स हाइड्रोक्लोरिक अम्ल
0	क्लोरीन	Cl_2	क्लोरीन तत्व
+1	हाइपोक्लोराइड्स	$Cl0^-$	सोडियम हाइपोक्लोराइड, कैल्शियम, हाइपोक्लोराइड
+4	क्लोरीन (4)	$Cl0_2$	क्लोरीन डाइ ऑक्साइड
+5	क्लोरेल क्लोरेट्स	$Cl0_3$ $Cl0_2^+$	पोटेशियम क्लोरेट, क्लोरिक अम्ल, डाई क्लोरेट ट्राई सल्फेट $(Cl0_2)_2$ (S_30_{10})
+6	क्लोरीन (6)	Cl_20_6	डाइक्लोरीन हेक्सोक्साइड (गैस)
+7	परक्लोरेट	$Cl0^-_4$	परक्लोरिक अम्ल, परक्लोरेट, साल्ट, (मैग्नीशियम परक्लोरेट), डाइक्लोरीन हैप्टाक्साइड

भारत में क्लोरीन उत्पादन करने वाले प्रमुख उद्योग निम्न हैं:-

क्लोर और उद्योग	क्षमता (एम0टी0पी0ए0)
गुजरात एल्कालीज एवं केमिकल लिमिटेड, भारूच	1,16,500
गुजरात एल्कालीज एवं केमिकल लिमिटेड, बडोदरा	1,53,500
श्रीराम एल्कालीज एवं केमिकल लिमिटेड, भारूच	62,500
भारतीय रायन एवं इंडस्ट्रीज लिमिटेड, जुनागढ	37,950
ग्रासिम इंडस्ट्रीज लिमिटेड, नागदा	1,08,000
जयश्री केमिकल लिमिटेड, गंजम	2,25,000
पंजाब एल्कालीज एवं केमिकल लिमिटेड, रोपर	99,000
सी.एल. केमिकल कम्प्लेक्स पटियाला लिमिटेड, पटियाला	82,500
ए.बी.सी.आई.एल.रेनुकूट, सोनभद्र	52,000
दुर्गापुर केमिकल लिमिटेड, बर्दवान	10,050

क्लोरीन के मानक

क्रं0	संस्थाएं	क्लोरीन की मात्रा	
		जल मिली ग्रा./ली.	वायु मिलीग्रा./क्यूबिक मी.
1.	व्यवसायिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य प्रशासन (औसतन भारित समय)	-	1.5
2.	अल्पकालिक घातक सीमा (एस.टी.ई.एल.)	-	2.95
3.	ए.सी.जी.आई.एच.	-	1.5
4.	पर्यावरण (संरक्षण) नियम, 1986 (क्लोरो-एल्कालीज इंडस्ट्रीज, की सभी प्रतिक्रियाओं से क्लोरीन)	-	1.5
5.	विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लू.एच.ओ.)	2.3	-
6.	यू.एस.ए.	4	-
7.	भारतीय संगठन	0.2-1	-

भारत में क्लोर-क्षार एवं उत्पादः

भारत में सन् 2012-13 में क्लोरीन की उत्पादन क्षमता 3.2 मिलियन प्रति टन है। जो कि पूरे संसार की उत्पादन क्षमता का केवल 4 प्रतिशत ही है। जबकि पूरे विश्व में क्लोरीन की उत्पादन क्षमता सन् 2012-13 में 80 मिलियन एम0टी0पी0ए0 है।

पर्यावरण में सामान्य अभिक्रियायें

1. क्लोरीन गैस ठण्डें पानी में मिलाने पर हायपोक्लोरस अम्ल बनाता है। जिसे सूर्य के प्रकाश में रखने पर यह ऑक्सीजन और हाइड्रोक्लोरिक अम्ल में अपघटित हो जाता है।

$Cl_2+H_2O \rightarrow HCl+HOCl$

$2\,HOCl \rightarrow 2\,HCl+O_2$

2. क्लोरीन धातुओं के साथ क्रिया करके क्लोराइड बनाती है।

$2Na+Cl_2 \rightarrow 2\,NaCl$

$Mg+Cl_2 \rightarrow MgCl_2$

$Zn+Cl_2 \rightarrow ZnCl_2$

$Cu+Cl_2 \rightarrow CuCl_2$

$2Au+3Cl_2 \rightarrow 2\,AuCl_3$

$2Al+3Cl_2 \rightarrow Al_2Cl_6$

3. कार्बन मोनोआक्साइड के साथ अभिक्रिया करके एक बहुत विषैली गैस बनानी है। जिसे ऑक्सीजन गैस कहते है।

$CO+Cl_2 \rightarrow COCl_2$

4. मेथेन गैस क्लोरीन से मिलकर हाइड्रोक्लोरिक अम्ल बनाती है।

$CH_4+2Cl_2 \rightarrow 4HCl+C$

5. क्लोरीन गैस की अमोनिया गैस से अभिक्रिया दो अवस्थाओं में अलग अलग होती है।

(अ) अगर अमोनिया गैस अधिकता में है तो वातावरण में अमोनिया गैस से क्रिया करके अमोनियम क्लोराइड बनाता है।

$8NH_3+3Cl_2 \rightarrow N_2+6NH_4Cl$

(ब) क्लोरीन गैस अधिक हो जाने पर अमोनिया से अभिक्रिया करके विस्फोट पदार्थ नाइट्रोजन ट्राइक्लोराइड बनाता है। जो कि एक कैंसर उत्प्रेरक तत्व है।

$NH_3+3Cl_2 \rightarrow N_2+NCl_3+3HCl$

क्लोरीन की उत्पादन प्रक्रिया

क्लोरीन का उत्पादन क्लोरीन बन्धों के रासायनिक ऑक्सीकरण या इलेक्ट्रोलाइसिस के द्वारा होता है। इस प्रक्रिया में अक्सर समुद्री जल या मशीन पथरीले नमक का प्रयोग करते है। यह नमक पानी में घुलकर ब्राइन बनाता है जो कि विद्युत अपघटनी सेल में विद्युत धारा का अच्छा संचालक की तरह काम करता है। इस विद्युत धारा के कारण क्लोरीन के आयन क्लोरीन के अणुओं में बदल जाते है। नमक और पानी मिलकर सोडियम हाइड्रॉक्साइड और हाइड्रोजन, जो कि कैथोड़ पर और क्लोरीन गैस एनोड़ पर आ जाते है। ये उत्पाद अत्यंत प्रतिक्रियाशील होते है इसलिए इन्हें कैथोड़ और एनोड़ से जल्द ही अलग कर लिया जाता है।

क्लोरीन उत्पादन की विधियाँ

क्लोरीन उत्पादन के लिए निम्न विद्युत अपघटनी विधियाँ प्रयोग होती है।

1. डायाफ्राम सेल विधिः-

इस विधि में डायफ्राम मतलब उत्पाद का क्रिया या मिश्रण नहीं बन पाने से है। इस विद्युत अपघटन में धनात्मक टाइटिनियम तथा ऋणात्मक छड स्टील की बनी होती है और ये इलेक्ट्रोड एक डायफ्राम के द्वारा एक दूसरे से अलग रहते है। इस डायाफ्राम से होकर केवल तरल ही आर-पार जा सकता है गैस नही। इस क्रिया के अनुसार हाइड्रोसाइड आयन धनात्मक इलेक्ट्रोड पर पहुँचने से रूक जाते है और क्लोरीन आयन्स सोडियम हाइड्राक्साइड के साथ डायाफ्राम के पार जाता है जिस से क्लोरीन गैस बनती है।

यह अभिक्रिया इस प्रकार हैः-

$+PO1:-2Cl \rightarrow C1_2+2e^-$

$-PO1:-2H_20^+2e^- \rightarrow 2OH^-+H^+$

2. मर्करी सेल विधिः-

इस विधि से डायफ्राम विधि की तुलना में अच्छी शुद्ध उत्पाद बनती है। इसमें मर्करी (पारा) ऋणात्मक इलेक्ट्रोड और धनात्मक में टाइटिनियम छड़ का प्रयोग होता है। ऋणात्मक छड़ पर सोडियम की अभिक्रिया से सोडियम अमलगम बनता है। वह अमलगम जल के साथ अभिक्रिया करके हाइड्रोजन गैस और कास्टिक सोडा बनाते है इस अभिक्रिया में क्लोरीन एक उप-उत्पाद के रूप में धनात्मक छड़ पर एकत्रित हो जाता है। इस क्लोरीन को ठंडा सुखाकर संकुचित एवं तरलीकृत कर लिया जाता है।

यह अभिक्रिया इस प्रकार है -

$+PO1:-2Cl \rightarrow Cl_2+2C^-$

$-PO1:-Na^++C^- \rightarrow Na^-$

$2Na+2H_2^0 \rightarrow 2Na^++2OH^-+H_2$

नोट- मर्करी सेल विधि को अब उपयोग में लाना निषेध कर दिया गया है क्योंकि इस प्रक्रिया में मरक्यूरिक क्लोराइड बनती है। जो कि स्वास्थ्य व वातावरण के लिए हानिकारक होती है।

3. मेम्ब्रेन सेल विधिः-

यह विधि डायाफ्राम विधि की तरह ही होती है। इसमें केवल धनायन मेम्ब्रेन के पार जा सकता है और तुलनात्मक रूप से सोडियम हाइड्राक्साइड बनाते है। मर्करी इलेक्ट्रोलाइसिस विधि में 50 प्रतिशत कास्टिक सोडा बनता है जब कि इस प्रक्रिया में कास्टिक सोडा का वाष्पीकरण कर दिया जाता है।

पहले के समय में 60 प्रतिशत यूरोपियन क्लोरीन उत्पादन मर्करी इलेक्ट्रोलाइसिस के द्वारा और 20 प्रतिशत डायाफ्राम एवं 20 प्रतिशत मेम्ब्रेन इलेक्ट्रोलाइसिस विधि के द्वारा होता था।

क्लोरीन के उपयोग

1. प्रथम विश्व युद्व में क्लोरीन एक हथियार की तरह प्रभावशाली रूप में काम में लायी गई जिसमें दम घुटने वाली गैस का काम किया था।

2. क्लोरीन तरणताल में हानिकारक जीवाणुओं को मारने के काम आता है।

3. घरों में काम आने वाली ब्लीच भी कॉकरोच तथा चीटियों को मारने के लिए उपयोग किया जाता है।

4. क्लोरीन का प्रयोग कई रासायनिक अभिक्रियाओं में भी होता है।

5. जब क्लोरीन कार्बन परमाणु के साथ बंध बनाता है तो एक कार्बनिक पदार्थ का निर्माण करता है जैसे कि प्लास्टिक, विलायक और तेल।

6. चिकित्सा विज्ञान में भी क्लोरीन तथा इसके उप उत्पादों का भी महत्वपूर्ण भूमिका है। क्लोरोफार्म का उपयोग सर्जरी के दौरान संवेदनहारी के रूप में किया जाता है।

7. क्लोरीन से बने रासायनों का प्रयोग कुछ रासायनिक उद्योगों में भी किया जाता है जैसे कि गोंद, पेंट, साबुन रबर, कार बम्पर, कीटनाशक और एण्टीफ्रीजिंग। क्लोरीन के उत्पाद वाली विनाइल क्लोराइड का उपयोग इन्स्युलेशन तार, बोतलें, ड्रेन पाइप एवं जल अवरोधक कपडे बनाने में किया जाता है।

क्लोरीन का प्रभाव लोगों पर कैसे हो सकता है?

1. लोगों पर क्लोरीन का प्रभाव उस स्थान से दूरी पर निर्भर करता है जहाँ से क्लोरीन का रिसाव हो रहा है।

2. अगर क्लोरीन का रिसाव कम समयान्तराल के लिए हुआ हो तो भी क्लोरीन का हमारे शरीर पर प्रभाव कम हो सकता है।

3. अगर क्लोरीन की मात्रा वायु में है तो यह साँस के माध्यम से जाने पर श्वास नलीय फेफडों को नुकसान पहुँचाती है।

4. यदि क्लोरीन जल में अधिक मात्रा में मिल जाने से उसे पीने से बीमारी हो सकती हैं

5. क्लोरीन गैस शरीर के संवेदनशील उतकों के संपर्क में आकर अम्ल बनाती है जिससे आँखों में जलन, गले में जलन तथा सीने में जकडन होती है।

6. क्लोरीन जल में अधिकता में पाये जाने के कारण यह ट्राई क्लोरो मेथेन (क्लोरोफार्म) नामक उप उत्पाद बनाता है। साथ ही अन्य हैलोजनों के साथ भी अभिक्रिया करके ब्रोमोफार्म, ब्रोमो डाइक्लोरोमेथेन व डाई ब्रोमोक्लोरोमेथेन भी बनाते है ये सभी उप उत्पाद कैंसर उत्प्रेरक (कारसेनो जेनिक) प्रभाव उत्पन्न करता है।

7. क्लोरीन अमोनिया से अभिक्रिया करके कार्बनिक व अकार्बनिक क्लोरामाइन्स बनाते है, जो कि प्रतिजैविक व रोगानुरोधक के रूप में प्रयोग किया जाता है परन्तु इनके घातक प्रभावों के कारण इनका प्रयोग निषेध किया जा चुका है।

डाई, एवं ट्राई क्लोरामाइन्स अम्लीय प्रकृति के होते हैं। डाई-क्लोरामाइन्स केवल आँख व नाक में जलन उत्पन्न करता है परन्तु डाई-क्लोरामाइन्स आँख, नाक के अलावा गला और श्वसन तंत्र को भी प्रभावित करता

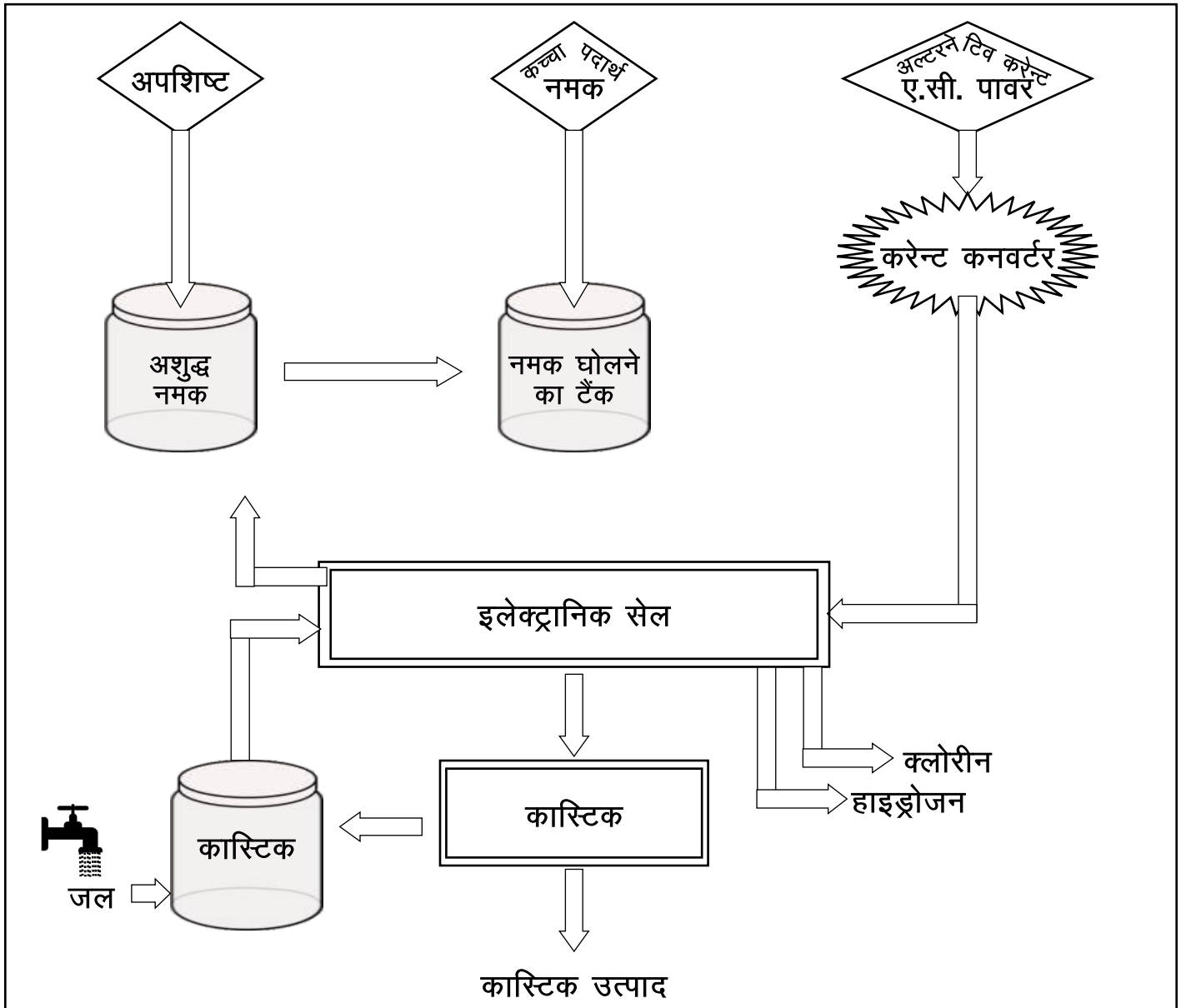

चित्र :- क्लोर एल्कालाइन संयंत्र और क्लोरीन उत्पादक योजनाबद्ध आरेख

क्लोरामाइन्स की सांद्रता एवं उनके मानवीय प्रभाव	
सांद्रता (मिलीग्रा./ली.) जल में	मानवीय प्रभाव
4 मिलीग्रा./ली.	सहनशील
5-10 मिलीग्रा./ली.	तनाव, चिडचिडाहट, आँखों में जलन
10-15 मिलीग्रा./ली.	सिरदर्द, खांसी, डायरिया
15 मिलीग्रा./ली. से अधिक	आंत कैंसर

है।

विषाक्तता का क्रम (ट्राई-क्लोरामाइन्स > डाई-क्लोरामाइन्स > मोनो क्लोरामाइन्स)

(NCl_3) > $(NHCl_2)$ > (NH_2Cl)

कुछ क्लोरामाइन्स (कार्बनिक व अकार्बनिक) मोनो क्लोरामाइन्स, डाई व ट्राई क्लोरामाइन्स जो कि कीटाणुनाशक की तरह प्रयोग में आते है परन्तु उनके दुष्परिणाम भी अलग-अलग समयान्तरालों पर भिन्न सांद्रताओं पर देखे जा सकते है जैसे कि क्लोरामाइन्स -टी., क्लोरामाइन्स-बी., डाई- क्लोरामाइन्स-टी., एन. -एन.-डाई क्लोरो- 2 नाइट्रो बेन्जीन सल्फोनामाइड आदि।

कैसे खुद को बचाया जाए क्लोरीन के प्रभावों से:-

1. क्लोरीन गैस से बचने के लिए जल्द से जल्द उस स्थान को छोडकर उससे दूर निकलना चाहिए तथा हो सके हो किसी उँचाई वाली जगह पर जाना चाहिए क्योंकि क्लोरीन हवा से भारी होती है।
2. अगर आपको लगता है कि आप क्लोरीन के सम्पर्क में आ चुके है। तो सबसे पहले शरीर से कपडे हटा दे तथा पूरे शरीर को पानी व साबुन से धुले और जल्द प्राथमिक उपचार कराये।
3. यदि आपके कपड़े तरल क्लोरीन से प्रभावित हुए है तो उन दूषित कपडों को सिर के उपर से न उतारें बल्कि उन्हें काटकर शरीर से अलग करें और आप इस तरह की समस्या से ग्रसित किसी व्यक्ति की सहायता कर रहे हैं तो ध्यानपूर्वक खुद को संक्रमित होने से बचायें।
4. उन दूषित कपडों को भी इधर उधर न फेंककर किसी थैले में उन्हें रखकर किसी राजकीय या

क्लोरीन का शरीर पर दुष्प्रभाव

क्रं0	प्रभाव	वायु में सांद्रता (पी.पी.एम)
1.	कई घण्टों बाद बहुत कम प्रभाव	1
2.	गंध परन्तु बहुत तीक्ष्णता वाली	3.5
3.	एक घंटे तक बर्दास्त करने लायक	4
4.	कुछ मिनट तक साँस लेने से नुकसान	5
5.	कम से कम मात्रा में भी लिए जाने पर गले में उत्तेजना	15.1
6.	तीव्र खाँसी	30.2
7.	यह मात्रा अधिक या एक घंटे के लिए घातक हो सकती है।	40 - 60
8.	कुछ ही समय में जानलेवा हो सकता है।	1000

स्थानीय स्वास्थ्य विभाग को सौंप दे।

5. अगर क्लोरीन के सम्पर्क से आपकी आँखों में जलन हो रही है तो अपनी आँखों को 10-15 मिनट तक सादे एवं स्वच्छ पानी से अच्छी तरह से धुलें।

6. अगर आप कान्टेक्ट लेंस पहनते हैं तो पहले उन्हे आँखों से हटायें और फिर आँखों को धुलें और उन कान्टेक्ट लेंस का प्रयोग दोबारा न करें। यदि आप चश्मा पहनते हैं तो उसे भली प्रकार धोकर प्रयोग में लायें।

7. अगर क्लोरीन सांस के माध्यम से मुंह के अंदर चला गया है। तो जबरदस्ती उल्टी या कुछ पीने का प्रयास न करें। बल्कि प्राथमिक उपचार करा लें और विशेषज्ञ की सलाह लें।

8. क्लोरीन गैस के रिसाव से बचने के लिए न तो उसकी दिशा में और न ही उसके विपरीत दिशा में जाना चाहिंए। बल्कि उसके दायें या बायें दिशा में जाने की कोशिश करना चाहिए।

उपसंहार

क्लोरीन गैस दैनिक जीवन में उपकारी गैस तो है ही लेकिन कभी भी किसी भी तरह से फैक्ट्री में या जहाँ भी क्लोरीन गैस का उत्पादन व इस्तेमाल होता है वहाँ यह खतरनाक व प्राण घातक हो सकती है। यह लेख विवरण वर्ष 1984 में भोपाल में मेथाइल आइसो साइनाइड घटना में मारे गये व बिमारी एवं अंधेपन से पीडित हुए लोगों व जानवरों में देखा गया है। जिसका असर आज भी वहाँ पर आनुवंशिक विकलांगता के रूप में मौजूद है।

★★★

भूमण्डलीय उष्मीकरण : कारण एवं दुष्परिणाम

डा0 सुधीर मेहरोत्रा एवं मिस अंकिता मिश्रा

जीव रसायन विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

भूमण्डलीय ऊष्मीकरण (ग्लोबल वार्मिंग) का अर्थ पृथ्वी की निकटस्थ-सतह वायु और महासागर के औसत तापमान में 20 वीं शताब्दी से हो रही वृद्वि और उसकी अनुमानित निरन्तरता है।

पृथ्वी की सतह के निकट विश्व की वायु के औसत तापमान में 2012 तक 100 वर्षों के दौरान 0.74$\pm$ 0.18 (1.33$\pm$0.32) की वृद्विहुई है। जलवायु परिवर्तन पर बैठे अंतरसरकार पैनल ने निष्कर्ष निकाला है कि '21 वीं शताब्दी के मध्य से संसार के औसतन तापमान में जो वृद्वि हुई है उसका मुख्य कारण एंथ्रोपोजेनिक (मनुष्य द्वारा निर्मित) ग्रीनहाउस गैसों की अधिक मात्रा है। ज्वालामुखी के साथ मिलकर सौर परिवर्तन जैसी प्राकृतिक घटनाएं 1950 से पहले वाले औद्योगिक काल तक कम गर्मी के प्रभाव दिखाई देते थे तथा 1950 के बाद इसके ठंडा होने के अल्प प्रभाव दिखाई देते थे।

इन निष्कषों की पुष्टि प्रमुख औद्योगिक देशों की सभी राष्ट्रीय वैज्ञानिक अकादमियों सहित कम से कम 30 वैज्ञानिक समितियों और विज्ञान अकादमियों ने की है। जहाँ एक ओर कुछ निजी वैज्ञानिकों ने आईपीसीसी की कुछ खोजों के प्रति असहमति व्यक्त की है, वहीं दूसरी ओर जलवायु परिवर्तन पर कार्य कर रहे अधिकांश वैज्ञानिकों ने आईपीसीसी के प्रमुख निष्कषों पर सहमति जतायी है। जैसा कि नाम से ही साफ है, ग्लोबल वार्मिंग धरती के वातावरण के तापमान में लगातार हो रही बढोत्तरी है। हमारी धरती प्राकृतिक तौर पर सूर्य की किरणों से उष्मा (हीट, गर्मी) प्राप्त करती है। ये किरणें वायुमंडल (एटमॉस्फियर) से गुजरती हुई धरती की सतह (जमीन, बेस) से टकराती हैं और फिर वहीं से परिवर्तित होकर पुनः लौट जाती है। धरती का वायुमण्डल कई गैसों से मिलकर बना है जिसमें कुछ ग्रीनहाउस गैसें भी शामिल है। इनमें से अधिकांश धरती के ऊपर एक प्रकार से एक प्राकृतिक आवरण बना लेती है। यह आवरण लौटती किरणें के एक हिस्से को रोक लेता है और इस प्रकार धरती के वातावरण को गर्म बनाए रखता है। गौरतलब है कि मनुष्यों, प्राणियों और पौधों के जीवित रहने के लिए कम से कम 16 डिग्री सेल्सियस तापमान आवश्यक होता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि ग्रीनहाउस गैसों में बढोत्तरी होने पर यह आवरण और भी सघन हो जाता है। ऐसे में यह आवरण सूर्य की अधिक किरणों को रोकने लगता है और फिर यहीं से शुरू हो जाते है ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभाव। आईपीसीसी द्वारा सारगर्भित जलवायु प्रतिमान के प्रतिरूपण इंगित करते है कि धरातल का औसत ग्लोबल तापमान 21वीं शताब्दी के दौरान और अधिक बढ़ सकता है। परिणामों में इतनी भिन्नता का कारण ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का अलग-अलग मापदण्ड इस्तेमाल किया जाना है और जलवायु संवेदनशीलता के भी अलग-अलग पैमाने बनाये गये है। हांलाकि अधिकतर अध्ययन 2100 तक की अवधि पर केन्द्रित हैं फिर भी भले ही ग्रीनहाउस के स्तर स्थिर हो जाये तब भी वार्मिंग तथा समुद्र के स्तर में वृद्वि होने की लगातार आशा की जाती है। महासागरों की विशाल गर्मी के

कारण ही संतुलन तक पहुँचने में विलम्ब होता है।

सारे संसार के तापमान में वृद्वि से समुद्र के स्तर में वृद्वि, मौसम की तीव्रता में वृद्वि, और अवक्षेपण की मात्रा और रचना में महत्वपूर्ण बदलाव आ सकता है। ग्लोबल वार्मिग के अन्य प्रभावों में कृषि उपज में परिवर्तन, व्यापार मार्गो में संशोधन, ग्लेशियर का पीछे हटना, प्रजातीय विलोपन और बीमारियों में वृद्वि शामिल है। शेष वैज्ञानिक अनिश्चितिताओं में भविष्य का गर्भ तापमान और पूरे विश्व के अलग-अलग भागों में गर्मी और संबंधित परिवर्तनों की भिन्नता शामिल है। ज्यादातर राष्ट्रीय सरकारों ने क्योटो प्रोटोकाल पर हस्ताक्षर कर दिये है और उसकी तस्दीक भी कर दी है। क्योटो प्रोटोकाल का उद्देश्य ग्रीनहाउस गैसों को कम करना है, पर सारे संसार में राजनीतिक और लोक बहस छिडी हुई है कि कोई कदम उठाना चाहिए कि नही ताकि भविष्य में वार्मिग को कम किया जा सके या उल्टाया जा सके या उसके असर को ढीला किया जा सके।

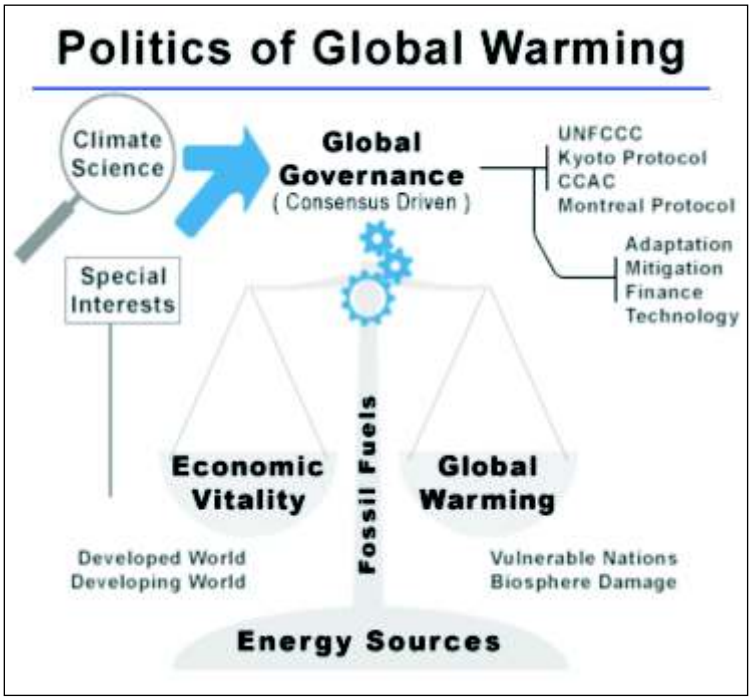

कारण

पृथ्वी की जलवायु बाहरी दबाव के चलते परिवर्तित होती रहती है जिसमें सूर्य के चारों ओर इसके अपनी कक्षा में होने वाले परिवर्तन भी शामिल है। कक्षा पर पडने वाले दबाव और चमक, ज्वालामुखी उद्गार तथा वायुमण्डलीय ग्रीनहाउस गैसों के अभिकेंद्रण को भी परिवर्तित करता है। वैज्ञानिक आम सहमति होने के बाद भी हाल ही में हुई गर्मी में वृद्धि के विस्तृत कारण शोध का विषय होते है। मानवीय गतिविधियों के कारण वातावरण की ग्रीनहाउस गैसों में वृद्वि से होने वाली अधिकांश गर्मी को औद्योगिक युग की शुरूआत के बाद से देखा गया और विगत 50 वर्षों के आंकड़े उपलब्ध हैं।

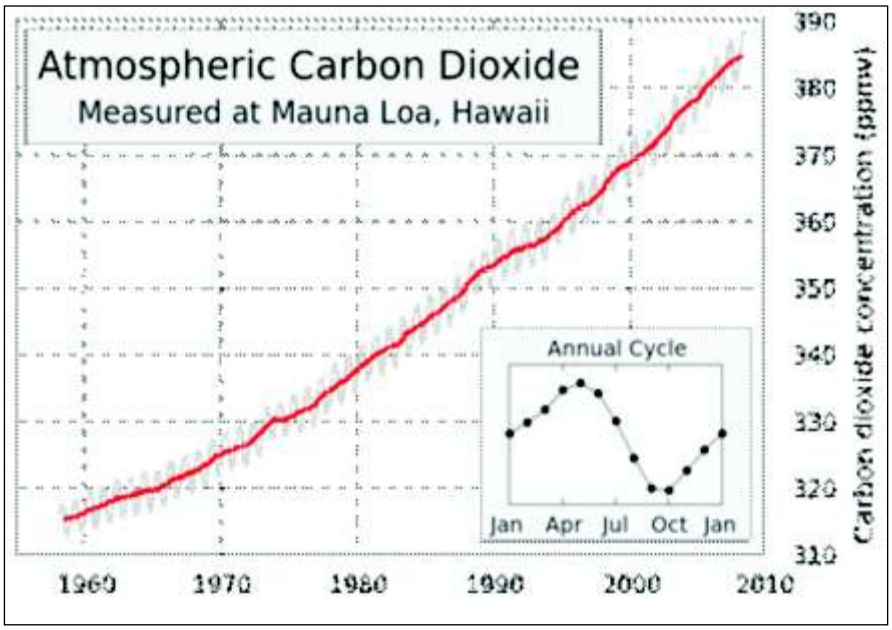

वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसें

ग्रीनहाउस प्रभाव की खोज 1824 में जोसेफ फोरियर द्वारा की गई थी तथा 1896 में पहली बार स्वेन्टी आरहेनेस द्वारा इसकी मात्रात्मक जाँच की गई थी।

वातारण में कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) के होने वाली बढ़ोत्तरी के मासिक मापन यह दर्शाते हैं कि अगर सारे वर्ष को देखा जाए तो छोटे-छोटे मौसमी परिवर्तन देखने को मिलते है। हर साल यह परिवर्तन उत्तरी गोलार्ध में बसंत मौसम के आखिर में अधिक हो जाते हैं और जब उत्तरी गोलार्ध में फसलें बीजने का समय होता है तो यह परिवर्तन कम हो जाते हैं क्योंकि पौधे वातावरण में से कुछ कार्बन डाईऑक्साइड हटा लेते है।

ग्रीनहाउस प्रभाव के रूप में अस्तित्व इस प्रकार विवादित नहीं है। स्वाभाविक रूप से ग्रीनहाउस गैसों के पास होने का मतलब है एक गर्मी के प्रभाव के बारे में 33^0C (डिग्री सेल्सियस), जो पृथ्वी पर रहने ही होंगे। पृथ्वी पर महत्वपूर्ण ग्रीनहाउस गैसे हैं, जल वाष्प , जो कि 36-70 प्रतिशत तक ग्रीनहाउस प्रभाव पैदा करता है (बादल इसमें शामिल नहीं है) (CO_2) जो कि 9-26 प्रतिशत तक ग्रीनहाउस प्रभाव पैदा करता है, मेथेन 4-9 प्रतिशत तक और ओजोन, जो 2-7 प्रतिशत तक प्रभाव पैदा करती है। मुद्दा यह है कि मानवीय गतिविधियों से जब कुछ ग्रीनहाउस गैसों की वायु मण्डलीय सांद्रता बढती है तब ग्रीनहाउस प्रभाव की शक्ति कैसे परिवर्तित होती है।

औद्योगिक क्रांति के बाद से मानवीय गतिविधि में वृद्वि हुई है, इसके कारण विकरणशील बाध्य CO, CO_2, मीथेन (CH_4) ट्रोपोजफेरिक ओजोन, सीएफसी और भी बहुत बढ गये है। अगर अणु की दृष्टि से देखें तो मीथेन ग्रीनहाउस गैस की तुलना में अधिक प्रभावी है, पर उसकी सांद्रता इतनी कम है कि उसका विकरण शीलता जो CO_2 की तुलना में केवल एक चौथाई है। प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होने वाली कुछ दूसरी गैसें ग्रीनहाउस प्रभाव में योगदान देती है। इनमें से एक नाइट्स ऑक्साइड कृषि जैसी मानवीय गतिविधियों के कारण उत्पन्न हो रही है। CO_2 और CH_2 की वातावरण सांद्रता 1700 वीं सदी में मध्य में औद्योगिक क्रांति की शुरूआत के बाद के क्रमशः 31 प्रतिशत और 149 प्रतिशत बढ गई है। पिछले 650,000 वर्षो के दौरान किसी भी समय से इन स्तरों को काफी अधिक माना जा रहा है। यह वह अवधि है जिसके लिए विश्वसनीय आंकडे आइस कोर से निकाले गये है। प्रत्यक्ष भूवैज्ञानिक प्रमाणों से यह माना जाता है कि CO_2 की इतनी ज्यादा मात्रा पिछली बार 20 करोड वर्ष पहले हुई थी। जीवाश्म ईधन के जलने से पिछले 20 वर्षो में मानवीय गतिविधियों से CO_2 में हुई बढ़ोत्तरी में कम से कम एक तिहाई वृद्वि है। शेष कार्य भूमि के उपयोग में परिवर्तन के कारण से होता है विशेषकर वनों की कटाई से ऐसा होता है। CO_2 की औद्योगिक दृष्टि से वातावरण में मात्रा लगभग 385 प्रति दस लाख (पीपीएम) है। भविष्य में CO_2 का स्तर ज्यादा होने की आशंका है क्योंकि जीवाश्म ईधन और भूमि के उपयोग में काफी परिवर्तन आ रहे है। वृद्वि के दर अनिश्चित है जो आर्थिक, सामाजिक, तकनीकी और प्राकृतिक घटनाओं पर निर्भर करेगी पर शायद आखिरकार जीवश्म ईधन की उपलब्धता ही निर्णायक साबित हो। आईपीसीसी की उत्सर्जन परिदृश्यों पर विशेष रिपोर्ट भविष्य के कई (CO_2) परिदृश्यों के बारे में बताती है

जो 2100 के आखिर तक 541 से लेकर 970 पीपीएम तक हो सकते है। इस स्तर तक पहुंचने के लिए तथा 2100 के बाद भी उत्सर्जन जारी रखने के लिए जीवाश्म ईधन के पर्याप्त भंडार हैं, यदि कोयला, बालू या मीथेन क्लेथ्रेट का व्यापक प्रयोग किया जाता है।

पुननिर्वेशन

जलवायु पर बाधक घटकों के प्रभाव विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा और भी जटिल हो जाते है। सर्वाधिक स्पष्ट प्रत्युत्तरों में से एक का संबंध जल के वाष्पीकरण से है CO_2 ऑक्साइड जैसी दीर्घकालीन ग्रीनहाउस प्रभाव वाली गैसों के मिलने से पैदा होने वाली गर्मी वायुमण्डल में जल के अधिक मात्रा में वाष्पीकरण का कारण बनता है क्योंकि जल-वाष्प खुद एक ग्रीनहाउस गैस है, इसलिए इससे वातावरण और भी ज्यादा गर्म हो जाता है, और इससे और भी ज्यादा पानी वाष्प में बदलता है (सकारात्मक पुननिर्वेशन), और यह प्रतिक्रिया चलती रहती है जब तक कि पुननिर्वेशन चक्र पर रोक न लग जाये। यद्यपि प्रत्युत्तर की यह प्रक्रिया वायु की नमी के कणों में बढोत्तरी करती है, तब भी सापेक्ष आर्द्रता या तो स्थिर होती हैं या थोडी सी घट जाती है क्योंकि वायु गर्म हो जाती है। प्रत्युत्तर का यह प्रभाव केवल धीरे-धीरे ही उल्टा हो सकता है।

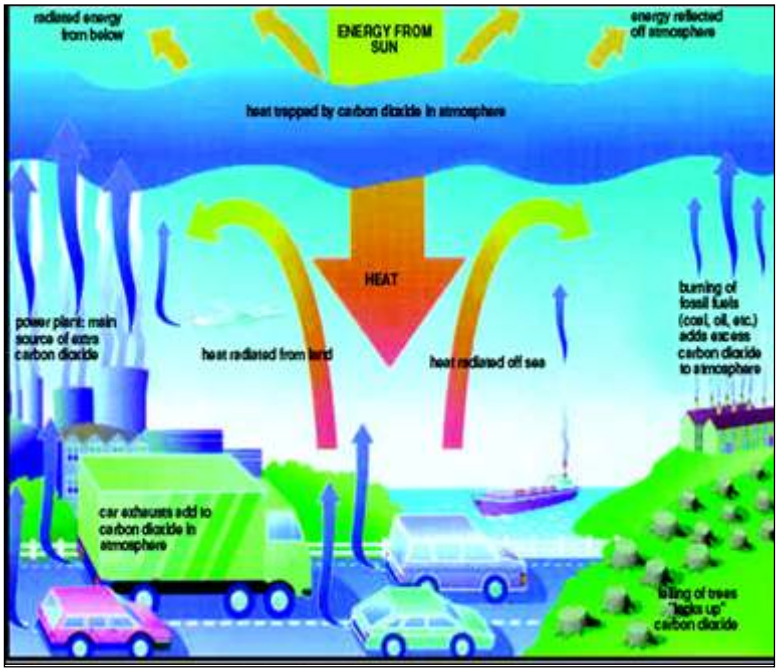

सौर परिवर्तन

पिछले 30 वर्षो से कुछ शोध सुझाव देते है कि सूर्य के योगदान का कम आंकलन किया गया है। ड्यूक विश्वविद्यालय के दो शोधकर्ताओं, बूरस बेस्ट और निकोला स्केफेटा ने यह अनुमान लगाया है कि सूर्य ने 1900-2000 तक शायद 45-50 प्रतिशत तक तापमान बढाने में योगदान दिया है और 1980 और 2000 के बीच में लगभग 25-35 प्रतिशत तक तापमान बढ़ाया है। पीटर स्कॉट और अन्य शोधकर्ताओं द्वारा पता चला है जलवायु मॉडल ग्रीनहाउस गैसों के प्रभाव को ज्यादा आंकते है और सोलर फोर्सिंग को ज्यादा महत्व नहीं देते। वे यह सुझाव देते है ज्वालामुखी धूल और सल्फेट एरोसोल्स को भी कम आँका गया है फिर भी वे मानते है कि सोलर फोर्सिंग होने के बावजूद, ज्यादातर वार्मिंग ग्रीन हाउस गैसों के कारण होने की संभावना है, खासकर के 20वीं सदी के मध्य से लेकर।

सूर्य की गतिविधि का एक असर यह भी होगा कि इससे स्ट्रैटोस्फियर गर्म हो जायेगी, जबकि ग्रीनहाउस गैस सिद्वान्त वहां पर शीतलन की भविष्यवाणी करता है। यह रूझान देखा गया है 1960 के बाद से लेकर स्ट्रैटोस्फियर ठंडा ही हुआ है। स्ट्रैटोस्फियर ओजोन की कटौती के कारण

शीतलता भी पैदा होती है, पर ओजोन रिक्तीकरण 1970 के दशक के अंत तक नहीं हुआ। सौर विभिन्नता और ज्वालामुखी गतिविधि के कारण औद्योगिक युग से लेकर 1950 तक गर्मी नहीं बढी बल्कि शीतलन ही हुआ है। 2006 में पीटर फौकल और संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी और स्विट्जरलैंड के अन्य शोधकर्ताओं ने पाया कि सूर्य की चमक में पिछले 1000 सालों से कोई परिवर्तन नहीं आया है। सौर चक्र के कारण पिछले 30 सालों में केवल 0.07 प्रतिशत की तापमान में वृद्वि हुई है। ग्लोबल वार्मिग के लिए यह बहुत छोटा पर महत्वपूर्ण योगदान देने वाला प्रभाव है। माइक लोक्क्वूद और क्लाउस फ्रोहलीच के एक शोध ने पाया कि 1985 से लेकर अब तक ग्लोबल वार्मिग और सौर विकिरण में कोई संबंध नहीं है, चाहे वह और सौर उर्जा की बात हो या ब्रह्ममाण्डीय किरणों की। 2007 में एक शोध से पाया गया कि पिछले बीस सालों में धरती पर आने वाली ब्रह्ममाण्डीय किरणों और बादलों और तापमान में कोई संबंध नहीं है।

जलवायु प्रतिमान

वैज्ञानिकों ने जलवायु के कम्प्यूटर मॉडल सहित ग्लोबल वार्मिग का अध्ययन किया है। ये मॉडल्स द्रव गतिशीलता के भौतिक विद्धांतों, विकरणीशील हस्तांतरण और अन्य प्रक्रियाओं पर आधारित हैं, कई जगहों पर सरलीकरण किया गया है क्योंकि कम्प्यूटर की अपनी सीमाएं होती है। जलवायु प्रणाली बहुत ही जटिल है। सारे आधुनिक जलवायु मॉडल अपने में एक वातावरणीय मॉडल लिए होते है और यह समुद्र के मॉडल और भूमि तथा समुद्र पर बर्फ के मॉडल के साथ जुड़ा होता है। कुछ मॉडलों में रासायनिक और जैविक प्रक्रियाओं के उपचार भी शमिल होते है। यह मॉडल पता लगाते हैं कि ग्रीनहाउस गैसों का प्रभाव अगर जोडा जाए तो एक गर्म जलवायु प्राप्त होती है। फिर भी, जब ये धारणा इस्तेमाल की जाती है तो इसमें भी जलवायु संवेदन शीलता का बहुत बडा रोल रहता है।

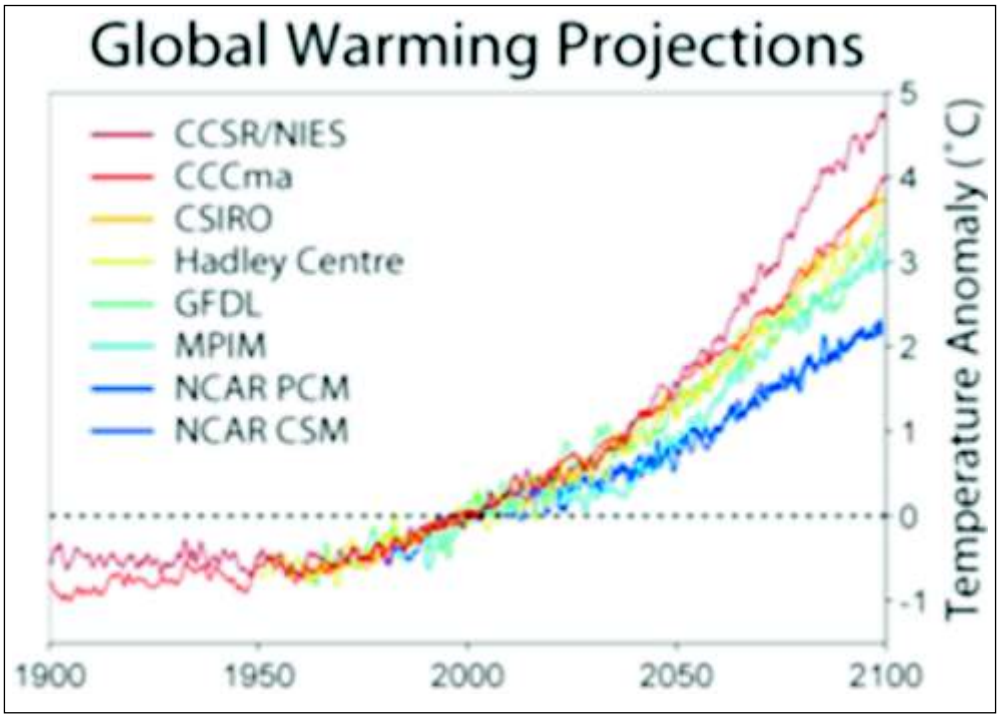

ग्रीनहाउस गैसों की सांद्रता में भविष्य की अनिश्चितताओं को ध्यान में रखते हुए आईपीसीसी 21वीं सदी के अंत तक एक चेतावनी की परिकल्पना करती है। 1980-1999 के मुकाबले मॉडल का इस्तेमाल हाल के जलवायु परिवर्तन के कारणों की जांच करने के लिए भी किया गया है, इसके लिए मापे हुए

परिवर्तनों की तुलना मॉडल के द्वारा बताये गये परिवर्तनों के साथ की जाती है।

अपेक्षित एवं आशातीत प्रभाव

यद्यपि विशेष मौसम घटनाओं को ग्लोबल वार्मिंग के साथ जोडना मुश्किल है, फिर भी विश्व के तापमान में वृद्वि से व्यापक परिवर्तन सहित बर्फ पीछे हटना, आर्कटिक और दुनिया भर में समुद्र के स्तर में वृद्धि हो सकती है। अवक्षेपण की मात्रा में परिवर्तन बाढ और सूखे को जन्म दे सकता है। चरम मौसम की घटनाओं की आवृत्ति एवं तीव्रता में भी परिवर्तन हो सकते है। अन्य प्रभावों में कृषि पैदावार में कमी के अलावा व्यापार के नए मार्गो का जुडना, छोटी गर्मियों, प्रजातियों का खत्म होना और रोगों के वेक्टर में वृद्वि शामिल है।

प्राकृतिक वातावरण और मानव जीवन पर कुछ असर कुछ हद तक ग्लोबल वार्मिंग की वजह से माने जा रहे है। आई पीसीसी की एक रिपोर्ट के अनुसार ग्लेशियर का पीछे हटना आईस सेल्फ का खत्म होना जैसा कि लार्सन आईस सेल्फ में हुआ समुद्र के स्तर का बढना, बारिश में परिवर्तन और बहुत ही खराब मौसम ग्लोबल वार्मिंग के कारण माने जा रहे है। समग्र पैटर्न, तीव्रता और आवृत्ति के लिए परिवर्तन संभावित है। यह कहना मुश्किल है कि यह सब ग्लोगल वार्मिंग के कारण है। अन्य प्रभावों में शामिल है कुछ क्षेत्रों में पानी की कमी, कुछ में अवक्षेपण का बढना, पर्वत में परिवर्तन और गरम मौसम के कारण और स्वास्थ्य के प्रतिकूल प्रभाव बढती हुई मौतों, और आर्थिक नुकसान, जो कि अतिवादी मौसम के कारण संभावित हैं, बढती हुई जनसंख्या के कारण और भी बद्तर हो सकते है। हालांकि शीतोष्ण क्षेत्र में इसे कुछ फायदे भी हो सकते है जैसे कि ठंड की वजह से कम मौते होना। आईपीसीसी तीसरी मूल्यांकन रिपोर्ट के लिए द्वितीय कार्यकारी समूह द्वारा बनाई गई रिपोर्ट में संभावित प्रभाव की समझ और इनका सारांश पाया जा सकता है। नई रिपोर्ट के अनुसार, ऐसा प्रमाण मिलता है कि उत्तरी प्रशांत महासागर में तेज गतिविधि पायी गयी है। पर लम्बी दूरी के प्रभावों का पता लगना,

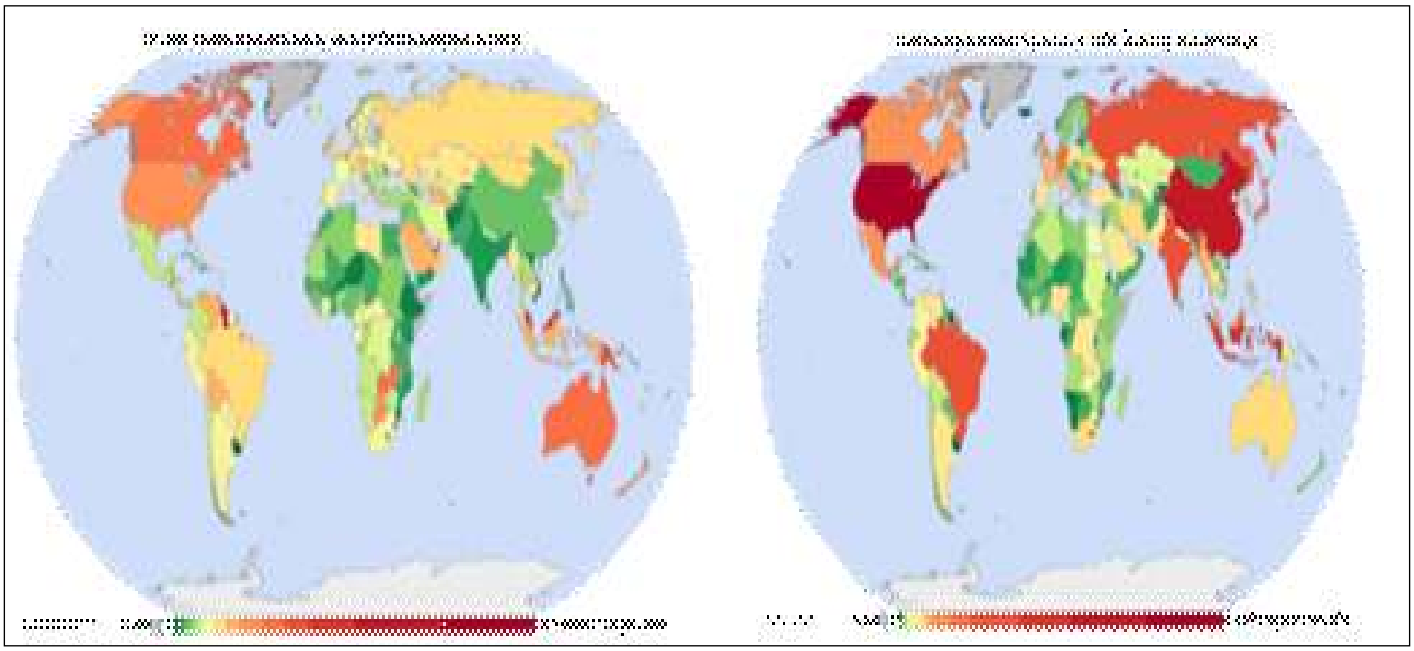

खासकर उपग्रह गणनाओं से पहले बहुत मुश्किल है सारांश यह भी स्पष्ट नही करता कि उष्णकटिबन्धीय चक्रवातों की दुनिया भर में वार्षिक संख्या में कोई संबंध है या नहीं।

आर्थिक

कुछ अर्थशास्त्रियों ने अनुमान करने की कोशिश की है कि दुनिया भर के जलवायु परिवर्तन से कुल कितनी आर्थिक क्षति होगी। अभी तक इस तरह के अनुमान कोई निर्णायक निष्कर्ष नहीं निकल पायें है। 100 अनुमानों के एक सर्वेक्षण में पाया गया है कि इसका मूल्य लगभग 350 अमेरिकी डॉलर प्रति टन कार्बन डाईऑक्साइड से लेकर 95 डॉलर प्रतिटन कार्बन डाईऑक्साइड तक हो सकता है जिसका औसत लगभग 43 डॉलर प्रति टन कार्बन डाईऑक्साइड निकलता है।

संभावित आर्थिक प्रभाव पर एक व्यापक रूप से प्रचारित रिपोर्ट सुझाव देती है कि दुनिया भर में अत्यधिक कठोर मौसम कम हो सकता है, कुल एक प्रतिशत तक बढ सकता है और बुरी से बुरी हालत में प्रति व्यक्ति खपत 20 प्रतिशत गिर सकती है। इस रिपोर्ट की पद्धति और निष्कर्ष की कई अर्थशास्त्रियों द्वारा आलोचना की गई है, मुख्यतः इसमें जो धारणायें हैं उनमें दी गई छूट और इसकी स्थितियों के विकल्प, जबकि अन्य ने आर्थिक जोखिम की गणना का समर्थन किया है, चाहे वे उनकी संख्याओं से भले ही सहमत नहीं है।

सामाजिक और राजनीतिक बहस

प्रति व्यक्ति ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन और प्रति देश ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के वैज्ञानिक निष्कर्ष के प्रचार के कारण दुनिया में उस विषय पर राजनीतिक और आर्थिक बहस छिड गयी है। गरीब क्षेत्रों, खासकर अफ्रीका, पर बडा जोखिम दिखाई देता है जबकि उनके ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन विकसित देशों की तुलना में काफी कम रहे है। इसके साथ ही विकासशील देश की क्योटो प्रोटोकॉल के प्रावधानों से छूट संयुक्त राज्य अमेरिका और आस्ट्रेलिया, द्वारा नकारी गई है और इसको अमेरिका के अनुसमर्थन का एक मुद्दा बनाया गया है। पश्चिमी दुनिया में संयुक्त राज्य अमेरिका की तुलना में यूरोप में यह विचार कि मानव का जलवायु पर बहुत गहरा प्रभाव है काफी महत्वपूर्ण है।

जलवायु परिवर्तन का मुद्दा एक नया विवाद ले आया है कि ग्रीनहाउस गैस के औद्योगिक उत्सर्जन को कम करना उपयोगी है या उस पर होने वाला खर्च अधिक नुकसानदेह है। कई देशों में चर्चा की गई है कि वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों को अपनाने में कितना खर्च आएगा और उसका कितना लाभ होगा। प्रतियोगी संस्थान और एक्सोन मोबाइल जैसी कम्पनियों ने यह कहा है कि हमें जलवायु की ज्यादा बुरी हालत की कल्पना कर ऐसे कदम नहीं उठाने है जो बहुत ज्यादा खर्चीले हों। इसी तरह, पर्यावरण की विभिन्न सार्वजनिक लॉबी और कई लोगों ने अधिक अभियान शुरू किए हैं जो जलवायु परिवर्तन का जोखिम (रिस्क ऑफ क्लाइमेट चेन्ज) पर जोर डालते है और कडे नियंत्रण करने की वकालत करते है। जीवाश्म ईधन की कुछ कंपनियों ने अपने प्रयासों को हाल के वर्षो में कम किया है या ग्लोबल वार्मिंग के लिए नीतियों की वकालत की है।

विवाद का एक और मुद्दा है कि उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं जैसे भारत और चीन से कैसी उम्मीद की जानी चाहिए कि वह अपने उत्सर्जन को कितना कम करें। हाल की रिपोर्ट के अनुसार, चीन के सकल राष्ट्रीय CO_2 उत्सर्जन अमेरिका से अधिक हो सकते हैं, पर चीन ने कहा है कि प्रति व्यक्ति उत्सर्जन अमेरिका से पाँच गुना कम है इसलिए उस पर यह बंदिश नहीं होनी चाहिए। भारत ने भी इसी बात को दोहराया है जिसे क्योटो प्रतिबंधों से छूट प्राप्त है और औद्योगिक उत्सर्जन का सबसे बडा स्रोत है।

★★★

पेयजल की गुणवत्ता : आवश्यकता तथा उपाय

अल्ताफ हुसैन खान, गणेश चन्द्र किस्कू

पर्यावरण अनुवीक्षण विभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

जल हमारी एक अनिवार्य आवश्यकता है। दैनिक जीवन में जल का उपयोग लगभग प्रत्येक कार्य में किसी न किसी रूप में होता है। अतः आवश्यकतानुसार जल की उपलब्धता, संग्रह तथा गुणवत्ता का ध्यान रखना आवश्यक है। आजकल घर के विभिन्न स्थानों पर जल की सीधी आपूर्ति की व्यवस्था की जाती है। रसोई घर, स्नान घर, शौचालय तथा हाथ धोने का वाशबेसिन इनमें प्रमुख हैं। बगीचे की सिंचाई, वाहन और आंगन की धुलाई तथा अन्य कार्यों हेतु सामान्यतः एक नल घर के बाहर लगाया जाता है। उपरोक्त स्थानों पर पूरे दिन पानी उपलब्ध रहता है। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु जल वितरण व्यवस्था अथवा स्वयं द्वारा भूमिगत जल पंप द्वारा निकालकर छत पर रखी गई जल संग्रह टंकी में रखा जाता है। चूंकि इस टंकी द्वारा ही समस्त कार्यों हेतु घर में जलापूर्ति होती है, जिसमें पेयजल भी सम्मिलित है, हमें इस जल के स्त्रोत, वितरण व्यवस्था तथा संग्रह के बारे में पर्याप्त जानकारी रखना चाहिए। यह जानकारी हमें हमारे घर में उपलब्ध पानी की गुणवत्ता को समझने में सहायक होगी।

जल की गुणवत्ता भारतीय मानक आई.एस. 10500:2012 ''पीने का पानी - विशिष्टि'' (दूसरा पुनरीक्षण) के अनुसार होना चाहिए। भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा पीने के पानी का मानक आई.एस. 10500 सर्वप्रथम 1983 में प्रकाशित किया गया था। इसका द्वितीय संस्करण 2012 में जारी किया गया जिसमें प्रदूषकों के गुणधर्म एवं प्रभावों तथा उनके विश्लेषण एवं निर्धारण हेतु उपलब्ध नवीनतम तकनीकों के आधार पर उनकी सीमा निर्धारित की गई है। इस विषय में अमेरिका, यूरोप तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानकों को भी ध्यान में रखा गया है। मानक में जल की भौतिक अवस्था तथा गुण, प्रदूषक रसायनों, विषैले तत्वों और कीटनाशकों के सान्द्रण को ध्यान में रखकर जल पीने योग्य है या नहीं तय किया जाता है।

इसके अतिरिक्त जल में बैक्टीरिया, वायरस, विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीव पाए जाते हैं जो कि कई प्रकार की बीमारियां फैलाते हैं। इन के बारे में भी मानक में स्पष्ट दिशा निर्देश तथा सीमा दी गई है। मानक में से कुछ महत्वपूर्ण प्रदूषकों तथा गुणों का विवरण निम्नलिखित

तालिका 1: पीने का पानी - विशिष्टि (दूसरा पुनरीक्षण) आई.एस. 10500:2012 चुने हुए महत्वपूर्ण प्रदूषक तथा गुण

क्रम सं०	गुण	स्वीकार्य	
1	रंग (हेजन यूनिट)	5	15
2	गंध	स्वीकार्य (गंधहीन)	स्वीकार्य (गंधहीन)
3	pH मात्रा	6.5-8.5	6.5-8.5
4	स्वाद	स्वीकार्य	स्वीकार्य
5	टरबीडिटी (एन.टी.यू.) (मटमैलापन)	1	5

6	कुल विलेय ठोस तत्व (मिग्रा/ली०)	500	2000
7	क्लोराइड (मिग्रा/ली०)	250	1000
8	फ्लोराइड (मिग्रा/ली०)	1.0	1.5
9	फ्री रेसीडुअल क्लोरीन (मिग्रा/ली०)	0.2	1.0
10	नाइट्रेट (मिग्रा/ली०)	45	45
11	फीनालिक कम्पाउन्ड (मिग्रा/ली०)	0.001	0.002
12	कुल एल्कलनिटी (मिग्रा/ली०) (कैल्शियम कार्बोनेट के रूप में)	200	600
13	कुल हार्डनेस (मिग्रा/ली०) (कैल्शियम कार्बोनेट के रूप में)	200	600
14	जिंक (मिग्रा/ली०)	5	15
15	कैडमियम (मिग्रा/ली०)	0.003	0.003
16	सायनाइड (मिग्रा/ली०)	0.05	0.05
17	लेड (मिग्रा/ली०)	0.01	0.01
18	पारा (मिग्रा/ली०)	0.001	0.001
19	निकिल (मिग्रा/ली०)	0.02	0.02
20	आर्सेनिक (मिग्रा/ली०)	0.01	0.05
21	क्रोमियम (मिग्रा/ली०)	0.05	0.05
22	पेस्टीसाइड रेसीडयू (माइक्रोग्राम/ली०) एल्फा एच.सी.एच. बीटा एच.सी.एच. डेल्टा एच.सी.एच. गामा एच.सी.एच. (लिंडेन) डी.डी.टी. एन्डोसल्फान मेलाथियान	 0.01 0.04 0.04 2.0 1.0 0.4 190.0	
23	वैक्टीरियोलाजीकल गुणवत्ता ई-कोलाई बैक्टीरिया/टोटल कोलीफार्म बैक्टीरिया/वायरस/अन्य जैविक सूक्ष्म जीवी	100 मिग्रा पानी में अनुपस्थित होना चाहिए	

तालिका में उद्धृत किया जा रहा है।

जल के स्त्रोत, उनका प्रदूषण तथा उपचार

घरेलू उपयोग के लिए आवश्यक जल के मुख्य स्त्रोत नदी, तालाब या जलाशय में एकत्र जल और भूमिगत जल है। प्राकृतिक रूप से उपलब्ध जल बहुधा मानव जनित प्रदूषण अथवा कुछ स्थानों पर धरती में पाए जाने वाले विषैले तत्वों के सम्पर्क में आने से पीने के योग्य नहीं रह जाता है। अतः उपयोग से पूर्व विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त जल का समुचित उपचार अनिवार्य है। प्राकृतिक जल स्त्रोतों के प्रदूषण का मुख्य कारण उद्योगों द्वारा छोड़ा गया प्रदूषित जल तथा शहरों में घरेलू तथा अन्य कार्यों से उत्पन्न प्रदूषित जल का सीधे इन स्त्रोतों तक पहुँच कर उनमें मिल जाना है।

हम यह जानते है कि औद्योगिक तथा शहरी प्रदूषित जल के उपचार हेतु शासन द्वारा तथा उद्योगों द्वारा अपशिष्ट जल के उपचार के लिए संयत्र लगाए गए हैं। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा हाल ही में प्रकाशित एक रिपोर्ट में यह बताया गया है कि केन्द्रीय सहायता प्राप्त इन संयत्रों में से लगभग पाँच में से एक संयत्र चालू हालत में नहीं है। इसके अतिरिक्त 152 में से लगभग 30-35 संयत्र अपनी पूरी क्षमता से अपशिष्ट जल का उपचार नहीं कर रहे हैं। परिणाम स्वरूप लाखों लिटर अपशिष्ट जल सीधे ही नदी नालो में बहा दिया जाता है तथा उनके जल को प्रदूषित कर देता है अथवा भूमि की सतह से रिसकर, भूमिगत जल को प्रदूषित कर रहा है।

रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि घरेलू उपयोग के लिए उपलब्ध कराए गए जल का 80 प्रतिशत अपशिष्ट जल के रूप में वापस आता है। यह जल नालियों द्वारा पुनः एकत्र किया जाता है ताकि इसका उपचार के बाद निस्तारण किया जा सके। पुरानी एवं टूटी-फूटी नलियों से भी बडी मात्रा में अपशिष्ट जल भूमिगत जल में मिल जाता है तथा उसे प्रदूषित करता है। देश के अन्य शहरों की भांति लखनउ स्थित दो सीवेज उपचार संयंत्रों की हालत भी अच्छी नहीं है। 2001 में गऊघाट पर 42 मिलियन लिटर प्रति दिन (एम.एल.डी.) क्षमता वाला संयंत्र शहर के चार नालों के दूषित जल को गोमती से मिलने से पूर्व उपचारित करने के लिए बनाया गया था। 2010 में इस संयंत्र की क्षमता 14 एमएलडी और बढ़ा दी गई। इसके बाद भी जब गोमती नदी के प्रदूषित होने के साक्ष्य मिलते रहे तब एक नया संयंत्र भरवारा में बनना शुरू हुआ। इस योजना के अंतर्गत गोमती में गिरने वाले सभी 22 नालों के दूषित जल का उपचार करने का प्रस्ताव था। यह दूसरा संयंत्र भी लगभग 2 वर्षो से चल रहा है परन्तु गोमती नदी की जल गुणवत्ता पर कोई विशेष प्रभाव नहीं देखा गया है।

उपरोक्त परिस्थितियों में पृथ्वी की सतह पर स्थित जल स्रोतों के पानी में विभिन्न प्रकार का कचरा (ठोस अपशिष्ट), विलम्बित और विलेय कण, रंग, स्वाद, घातक रसायन, जहरीली धातुएं, कीटाणुनाशक, बैक्टीरिया एवं वायरस बडी मात्रा में घुले हो सकते है। उपलब्ध जल की गुणतत्ता के आधार पर बनाए गए जल शोधन संयंत्र में जल को उपचारित किया जाता है। इस उपचार में फिल्टरेशन, कोआगुलेशन, फ्लाकुलेशन, सैटलमेंट, ऑक्सीकरण, ओजोनीकरण अथवा क्लोरीनीकरण इत्यादि क्रियओं के द्वारा जल को शोधित किया जाता है। जल शोधन संयंत्र का

रखरखाव तथा संचालन यदि भली-भांति किया जाए तो यहाँ से हमें शुद्वजल प्राप्त हो सकता है। जिसे पाईप लाइनों द्वारा घरों में पहुँचाया जाता है।

भूमिगत जल को बहुधा बिना किसी उपचार के उपयोग में लाया जाता है। भूमिगत जल का दोहन गहरे नलकूपों द्वारा किया जाता है। नए नलकूपों में तो स्थिति ठीक है परन्तु पुराने नलकूपों में डाली गई पाईप लाइन के क्षतिग्रस्त हो जाने से बडी मात्रा में रेत के सूक्ष्म कण जल में मिश्रित हो जाते है। यह सूक्ष्म कण मनुष्य की किडनी के लिए हानिकारक है, जो कि किडनी में स्टोन बनने का एक कारक है। भूमिगत जल का अत्यधिक दोहन हो रहा है। एक ओर हमारी शासकीय/सामुदायिक जल योजनाएं भूमिगत जल निकाल कर उसका वितरण कर रही है। वहीं दूसरी ओर व्यक्तिगत रूप से घरों, होटलों, संस्थानों, उद्योगों तथा अनेकानेक रूप में भूमिगत जल का बेरोकटोक दोहन हो रहा है। परिणामस्वरूप भूमिगत जल का स्तर दिनोदिन गिरता चला जा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार पानी का पहला एक्यूफर (जल स्तर का चरण) 150 एमसीजीएल (मीटर बिलो ग्राउन्ड लेवेल) तक है। दूसरा 160 से 210, तीसरा 250 से 360 और चौथा 380 से 600 एमवीजीएल तक होता है। लखनऊ के जलस्तर में पानी का पहला एक्युफर अधिक जल दोहन के कारण समाप्त हो चुका है जिसके कारण कम गहराई के हैण्डपंप तथा नलकूप पानी देने में असमर्थ है।

जैसे-जैसे हम पृथ्वी के तल से निचले स्तर पर जाएंगे, पानी में रसायनों का सान्द्रण बढ़ता जाएगा जो कि हाानिकारक होगा। तेजी से नीचे जाते जलस्तर के कारण पानी में आर्सेनिक समेत दूसरे हानिकारक रसायनों की मात्रा बढ़ रही है। लखनऊ के कुछ क्षेत्रों में भूमिगत जल में आर्सेनिक का स्तर 11 पार्टस पर बिलियन (पीपीएबी) तक पाया गया है जो कि अंतराष्ट्रीय मानक 10 पीपीएबी से अधिक है। शहर के अन्य स्थानों पर भी यह स्तर लगातार बढ़ रहा है। पानी में आर्सेनिक की अधिक मात्रा मनुष्य में अनेक प्रकार की विसंगतियां उत्पन्न कर सकती है। आर्सेनिकयुक्त जल के पीने से फेफडों, त्वचा, प्रोस्टेट, किडनी और लिवर का कैंसर, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप, जैसी बीमारियां हो सकती हैं।

जल वितरण व्यवस्था

जैसा कि पहले बताया जा चुका हैं जल शोधन संयंत्र में उपचारित जल अथवा नलकूप से प्राप्त भूमिगत जल का एक ओवरहेड टंकी में संग्रह किया जाता है। यहाँ से जल पाइप लाइनों द्वारा घरों में पहुँचाया जाता है। भूमिगत पाईप लाइनें सडक के किनारे तथा अन्य निचले स्थानों से होकर डाली जाती है। वर्षा ऋतु के समय पाईप लाइन के रास्तों में कई जगह कीचड तथा गंदगी एवं जलभराव हो जाता है। पुराने तथा क्षतिग्रस्त पानी के पाइपों में बाहर की गंदगी के मिल जाने से घरों के नलों में गंदा, कीचड़युक्त मटमैला, रेत तथा मिट्टी के कण सहित, दुर्गन्धयुक्त पानी पहुँचता है। पानी के पाईप गंदे पानी की नालियों (सीवर) से भी सम्पर्क में रहते है अतः क्षतिग्रस्त पाइपों में बह रहा शुद्वपानी भी अशुद्ध हो जाता हैं। जहाँ एक ओर अशुद्ध जल देखने में अच्छा नहीं लगता वहीं उपयोग करने में भी यह असुविधाजनक होता है परन्तु अन्य साधनों के अभाव में जब हमारे नागरिक विवश होकर अशुद्ध जल का उपयोग पीने, भोजन बनाने तथा अन्य दैनिक क्रियाओं

में करते है तो वह अनेक प्रकार की बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

चिकित्सालयों के आँकडो तथा चिकित्सकों के अनुसार अगस्त तथा सितम्बर महीनों में दूषित जल के कारण होने वाली बीमारियों से बहुतायत में हमारे नागरिक प्रभावित होते है। इसमें उदर से संबंधित बीमारियां (गैस्ट्रिक बीमारियां) और कोलाइटिस एवं टाइफाइड या हेपाटाइटिस जैसी बीमारियां हो सकती हैं। जल संस्थानों द्वारा पाइप लाइन का रखरखाव तथा उनकी सफाई में कोताही करने के कारण यह समस्याएं होती हैं। ओव्हर हेड टंकियों की सफाई तथा उनका ब्लीचिंग पाउडर इत्यादि द्वारा टंकियों में पनप रहे सूक्ष्म जीवों बैक्टीरिया वायरस इत्यादि के रोकथाम के अभाव में भी दूषित जल पाईप लाइनों द्वारा घरों तक पहुँचता है।

घरों के छत पर रखी टंकी की सफाई तथा रखरखाव

अब तक हम यह जान चुके है कि हमारे घर तक शुद्वजल की उपलब्धता अनेक कारकों पर निर्भर है। हमें यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि जो जल हमें घर पर प्राप्त हो रहा है वह पीने तथा घरेलू उपयोग के लिए उपयुक्त है। पाईप लाइन द्वारा प्राप्त जल अथवा नलकूप व पंप द्वारा निकाले गए भूमिगत जल को हम घर के छत पर स्थित सीमेन्ट कंक्रीट, लोहे की चादर या प्लास्टिक की टंकियों में संचित करते है तथा पाईप लाइनों द्वारा घर के विभिन्न स्थानों पर पहुँचाते है। पीने तथा खाना बनाने के लिए आावश्यक जल रसोईघर में लगे नल द्वारा लिया जाता है। नल से निकले पानी को सीधे ही हम पीते है। कुछ परिवार जल के शुद्विकरण के लिए घरेलू वाटर फिल्टर लगाकर जल की गुणतत्ता के प्रति आश्वस्त हो जाते हैं और इस बात पर तनिक भी ध्यान नहीं देते कि जिस टंकी में जल संग्रह किया जा रहा है उसकी स्थिति कैसी है। अधिकतर परिवार संग्रह टंकी की सफाई की कोई परवाह नहीं करते तथा घर तक शुद्वजल की आपूर्ति के होने पर भी अपनी लापरवाही के चलते बीमारियों के शिकार होते रहते हैं।

हमें यह समझ लेना चाहिए कि नियमित सफाई के अभाव में पानी संग्रह की टंकियां अशुद्ध जल का एक स्रोत बन जाती हैं। टंकियों के अशुद्ध पानी को पीकर हमें अपने परिवार तथा आगन्तुकों के स्वास्थ्य को दाँव पर नहीं लगाया चाहिए। हमें यह सुनिश्चित करना चहिए कि हमारे घर, अथवा अपार्टमेंट के छत पर रखी टंकियों की नियमित सफाई की जाए तथा यह कार्य प्रशिक्षित विशेषज्ञों द्वारा ही कराया जाए। टंकियों की सफाई करते समय इनके आंतरिक तल को अच्छी तरह रगड कर साफ किया जाना चाहिए तथा बैक्टीरिया नाशकों या ब्लीचिंग रसायनों का सही उपयोग किया जाना चाहिए।

टंकियों की सफाई श्रमिकों द्वारा हाथों से या मशीनों द्वारा कराई जा सकती है। आजकल मशीनों द्वारा पानी की टंकियों की सफाई करने वाली विशेषज्ञ कम्पनियां इस कार्य को करने हेतु बाजार में उपलब्ध है। यह कम्पनियां छोटे से लेकर बडी क्षमता वाले टंकियों को विभिन्न प्रकार की मशीनों का उपयोग कर पूरी दक्षता के साथ साफ करती है। इनके पास उच्चदाब वाटर जेट क्लीनर होता है जो कि पानी की टंकियों की दीवारों तथा फर्श पर जमें हुए सभी प्रकार के कचरे, कीचड, मिट्टी, तेल, ग्रीस एवं पेन्ट इत्यादि को निकाल देता है। सफाई के बाद टंकी के फर्श पर एकत्र हुए

स्लज को एक पंप द्वारा बाहर फेंक दिया जाता है। बची हुई धूल व मिट्टी को एक इन्डस्ट्रियल पंप के द्वारा साफ किया जाता है। सफाई चाहे हाथ से की गई हो अथवा मशीन से, बैक्टीरिया और जीवाणुओं का उपचार अनिवार्य है जो कि क्लोरीन युक्त ब्लीचिंग पाउडर, एलम या अन्य किसी एण्टी बैक्टीरियल एजेन्ट द्वारा किया जाता है। अंत में टंकी की धुलाई साफ पानी से की जाती है ताकि उसमें उपरोक्त रसायन बचे न रह जाए। इसके लिए टंकी को पूरा भरकर उसका सारा पानी घर के सब नलों को खोलकर एक बार बहा दिया जाता है। इसके बाद भी यदि पानी में रसायनों की दुर्गन्ध या अवांछित स्वाद आ रहा हो तो यह प्रक्रिया दोहराई जानी चाहिए।

यदि हम टंकी में साफ पानी एकत्र करते है तथा हर छः महीनों या आवश्यकतानुसार नियमित रूप से टंकी की सही सफाई करते हैं तो हम अपने परिवार के लिए स्वच्छ जल की आपूर्ति सुनिश्चित कर सकते हैं। आजकल पीने के पानी के फिल्टर हर घर में देखे जा सकते है जिनमें पानी टंकी से ही आता है। इन फिल्टरों की नियमित रखरखाव एवं सफाई भी आवश्यक है अन्यथा इसमें एकत्र गंदगी पानी की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव डालती है तथा कई बार फिल्टर किए गए पानी की गुणवत्ता बिना फिल्टर पानी की तुलना में घटिया होती है। हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि घरों में लगाए गए फिल्टर हमें घटिया गुणवत्ता वाले पानी को सुरक्षित सीमा तक शुद्ध करके नहीं दे सकते। अतः इस लेख के समस्त बिन्दुओं को दृष्टिगत रखते हुए तथा जल वितरण विभाग की सलाह के अनुसार पूर्णतः सुरक्षित पानी का उपयोग पीने, खाना बनाने तथा अन्य घरेलू कार्यो में करना उचित होगा।

★★★

आर्सेनिक: घातक हो सकती है विषाक्तता!

ललित प्रताप चंद्रवंशी एवं डॉ. विनय कुमार खन्ना

विकासात्मक विषविज्ञान विभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

आजकल धात्विक प्रदूषण एक विकराल पर्यावरण समस्या का रूप ले चुका है इस प्रकार के प्रदूषण में मुख्यतः भारी धातुएं पायी जाती है। प्रकृति में 92 भारी धातुयें विद्यमान हैं इनमें से 22 धातुयें हमारे शरीर के विकास के लिए माइक्रोन्युट्रियंट्स की तरह आवश्यक होती है। भारी धातुओं के अंतर्गत वे तत्व आते हैं जिनका घनत्व 5 से अधिक होता है। आधुनिक संकल्पना के अनुसार भारी धातुएं उनको कहा जाता है जिनमें इलेक्ट्रॉन स्थानांतरण का गुण पाया जाता है। पर्यावरण में भारी धातुओं की बढती सान्द्रता के लिए मुख्यतः धातुओं का खनन, परिवहन, धातुकर्म और कृषीय व अन्य औद्योगिक क्रिया कलाप आदि कारक जिम्मेदार है। चिंता की बात यह है कि खाद्य सामग्री (सामान्यतः समुद्री भोजन व चावल) व पीने का पानी में भी भारी धातुओं की भारी मात्रा में उपस्थिति पायी गयी है। आर्सेनिक धातु के समान एक प्राकृतिक तत्व है जो पृथ्वी की भूगर्भ में खनिज व चट्टानों में पाया जाता है। चट्टानों में आर्सेनिक अकार्बनिक पदार्थ के रूप में पाया जाता है। भूमि कटान इत्यादि के माध्यम से यह नदी के तलछट में एकत्रित होता रहता है और रिसकर भूजल में मिल जाता है। मिट्टी और तलछट में भी सूक्ष्म जीव उपस्थित रहते है जो आर्सेनिक युक्त यौगिक उत्पन्न करते है और यह यौगिक जल में घुलनशील होता है।

आर्सेनिक में अधातु के गुण अधिक और धातु के गुण कम विद्यमान है। इस धातु को उपधातु (मेटालॉयड) की श्रेणी में रखा जाता है। आर्सेनिक मुख्यतः यौगिक अवस्था में आक्साइड तथा सल्फाइड अयस्क की अवस्था में ज्वालामुखी के वाष्पों में, समुद्र तथा अनेक खनिजीय जलों में मिश्रित रहता है। कहीं-कहीं यह तत्व अन्य धातुओं के साथ यौगिक रूप में मिलता है, मुख्यतः सिल्वर, एंटीमनी, ताम्र, लौह और कोबाल्ट के साथ आर्सेनिक यौगिक बनाता है। साधारणतः आर्सेनिक के दो अपर रूप होते है, एक धूसर रंग का आर्सेनिक अपारदर्शी है। इसके मणिभ षटकोणीय कठोर, भंगुर तथा धातु की चमक लिए होते है। यह आर्सेनिक तत्व का स्थायी रूप है। पीला आर्सेनिक पारदर्शी होता है। इसके मणिभ घनाकार तथा नर्म होते है। यह अस्थायी अपर रूप है। आर्सेनिक लवण सामान्यतः गंधरहित, स्वादरहित तथा रंगहीन होते है अतः इसका प्रयोग आसानी से किया जा सकता है। अकार्बनिक लवण अधिक हानिकारक होते है तथा

आर्सेनिक की कुछ विशेषताएं निम्नांकित हैं:-
संकेत : **As**
परमाणु क्रमांक : **33**
परमाणु भार : **74.96**
आयन का अर्धव्यास : **0.69 X 10 E-8** सेंटीमीटर
गलनांक : **720°** सेंटीग्रेड (**36** वायुमंडल दाब पर)
विदयुत्प्रतिरोधकता : **3.5 X 10 E - 5** (ओहम-सेंटीमीटर) **20°** सें. पर आर्सेनिक यौगिकों तीन प्रमुख के रूप में वर्गीकृत किया गया है
1.अकार्बनिक **2.** जैविक **3.** आर्सीन गैस
विषाक्ता मुख्य रूप से अकार्बनिक या कार्बनिक यौगिक पर निर्भर करती है
संयोजकता, घुलनशील, शारीरिक स्थिति और अवशोषण और निष्कर्षण की दरों पर निर्भर करती है
सामान्य तौर पर, आर्सेनिक यौगिकों सर्वोच्च से सबसे कम विषाक्ता को सीन पर वर्गीकरण निम्न तरीके से दिया जा सकता है:-
अकार्बनिक त्रिसंयोजक, यौगिक, कार्बनिक त्रिसंयोजक, यौगिक, अकार्बनिक पंचयुक्त यौगिक, जैविक पंचयुक्त यौगिक और मौलिक आर्सेनिक।

शरीर पर धीरे-धीरे कार्य करतें है। सबसे घातक आर्सेनिक आक्साइड होता है।

इतिहासः

आर्सेनिक को प्राचीन काल से जहर का राजा कहा जाता है। कौटिल्य ने अपने 'अर्थशास्त्र' में आर्सेनिक सल्फाइड का जिक्र किया है उसमें इस अयस्क का नाम हरिताल था जिसका उपयोग कागज से स्याही मिटाने में किया जाता था। आधुनिक जगत में आर्सेनिक तत्व की खोज का श्रेय जर्मन शैक्षिक अलबर्ट मैगनस को जाता है जिन्होंने इस 1250 ई0 में खोजा था। एक जहर के रूप में अपनी उपस्थिति के अलावा, सदियों से आर्सेनिक दवा के रूप में इस्तेमाल किया जाता रहा है। 2400 सौ वर्ष पहले पारम्परिक चीनी चिकित्सा के एक भाग के रूप में आर्सेनिक इस्तेमाल किया जाता था। पश्चिमी दुनिया में, सैल्वरसन के रूप में आर्सेनिक यौगिकों का सिफलिस के उपचार के लिए इस्तेमाल किया जाता था तथा यह कई टॉनिकों में एक अनिवार्य घटक था। आर्सेनिक विषाक्तता से आकस्मिक और या जानबूझकर कुछ प्रसिद्व व्यक्तियों की हत्यायें भी हुई, जिनमें ग्रेट ब्रिटेन के जार्ज तृतीय (1820), नेपोलियन बोनापार्ट (1821), सिमोन बोलिवार (दक्षिण अमेरिकी स्वतंत्रता सेनानी, 1830), राजा फैसल (ईराक, 1933), क्लेयर बूथी लूसी (अमेरिकी राजदूत, 1986), सम्राट गुंग्क्सु (चीन, 2008) आदि प्रमुख है।

आर्सेनिक - उपयोग व विषाक्तता के कारणः

1. आर्सेनिक आक्साइड तांबे, सीसे तथा अन्य धातुओं के अयस्क से सहजात के रूप में निकाला जाता है। आर्सेनिक आक्साइड अन्य आर्सेनिक यौगिकों के निर्माण में काम आता है। इसका उपयोग काँच बनाने तथा चमडे की वस्तुएँ सुरक्षित करने में होता है। इस काम में लेड आर्सेनाइट, कैल्शियम आर्सेनाइट और ताँबे के कार्बनिक आर्सेनाइट का विशेष उपयोग होता है। आर्सेनिक के कुछ अन्य यौगिक वर्णकों (रंगों) के लिए विशेष उपयोगी होते है।

2. आर्सेनिक का उपयोग मिश्र धातुओं के निर्माण में भी होता है। सीसे में एक प्रतिशत आर्सेनिक डालने से उसकी पुष्टता बढ जाती है। इस मिश्रण को उपयोग छर्रे बनाने में जोता है। ताँबे के साथ थोडी मात्रा में आर्सेनिक मिलाने पर उसका आक्सीकरण तथा क्षरण रूक जाता है।

3. कुछ व्यक्तियों का विचार है कि आर्सेनिक सूक्ष्म मात्रा में लाभकारी होता है। अतः उसके अनेक कार्बनिक तथा अकार्बनिक यौगिक रक्ताल्पता, तंत्रिकाव्याधि, गठिया, मलेरिया, प्रमेह तथा अन्य रोगों के उपचार में प्रयुक्त होते है। विशेषकर प्रमेह के उपचार में सैल्वरसन का उपयोग होता है, जो आर्सेनिक का कार्बनिक यौगिक आर्सफिनामीन हाइड्रोक्लोराइड है।

4. आर्सेनिक यौगिक से कीटनाशक दवायें भी बनाई जाती है। कैल्शियम आर्सेनेट टमाटर के कीडे नष्ट करता है। लेड आर्सेनेट फल, फूल तथा अन्य हरी तरकारियों के कीडों को नष्ट करता है। जिससे हरी तरकारियों में आर्सेनिक की विषाक्ता बढ रही है। लकडी व फर्नीचर को दीमक और

कीडे मकोडे से बचाने के लिए लकडी व फर्नीचर पर कॉपर आर्सेनाइट का लेप किया जाता है।

5. रोक्सारसोन, जो एक आर्सेनिक का उत्पाद है, कवक के विकास को रोकने के लिए मुर्गियों की फीड में मिलाया जाता है। नतीजतन चिकन अंडे और मांस आर्सेनिक से दूषित हो रहे है।

6. अर्सेनोबीटेन नामक आर्सेनिक का एक जैविक उत्पाद है जो समुद्री जीवों व पौधों में पाया जाता है इनके सेवन से भी विषाक्तता उत्पन्न होती है।

7. स्थानीय खनन गतिविधियों से या ज्वालामुखी राख व मिट्टी में उपस्थिति आर्सेनिक से पीने का पानी दूषित हो रहा है।

8. सिगरेट में आर्सेनिक का उपयोग व्यापक रूप से होता है। कैलिफोर्निया एयर संसाधन बोर्ड और स्वास्थ्य सेवा के अमेरिकी विभाग से एक रिपोर्ट के मुताबिक, धूम्रपान करने वालों के यह श्वसन तंत्र में जमा हो जाता है। धूम्रपान करने वालों के फेफडों के कैंसर में वृद्वि हुई है।

9. गैलियम आर्सेनाइड का विभिन्न प्रकार के माइक्रोवेव उपकरणों के घटकों, लेजरों, प्रकाश उत्सर्जक डायोड, फोटोएलेक्ट्रिक रासायनिक सैल और अर्धचालक उपकरणों में प्रयोग किया जाता है।

10. आर्सेनिक युक्त पानी से प्रमुखतः चावल व अन्य फसलों की सिंचाई करने से खाद्यान में भी आर्सेनिक पहुँच रहा है। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) ने अपने एक शोध में दावा किया है कि पश्चिम बंगाल, बिहार तथा उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्सों में भूजल में आर्सेनिक की मात्रा ज्यादा होने से वहां पैदा होने वाले चावल में भी आर्सेनिक पहुंच रहा है जिसकी वजह से लोगों में आर्सेनिक से गंभीर रोग हो रहे है। सीएसआईआर के महानिदेशक समीर. के. ब्रह्मचारी ने बताया कि राज्य में उगाई जाने वाली 90 में से सिर्फ एक दर्जन किस्में ही ऐसी पाई गई जिनमें आर्सेनिक की मात्रा प्रति किग्रा

150 माइक्रोग्राम से कम थी। कुछ किस्मों में यह 1250 माइक्रोग्राम प्रति किग्रा तक पाई गई है। यह अध्ययन पं0 बंगाल के वर्धमान में किए गए थे।

जापानी वैज्ञानिकों ने एक शोध के जरिये बताया है कि चावल की कुछ खास किस्में भूजल के स्रोतों से सिचाई किये जाने पर आर्सेनिक की भारी मात्रा अवशोषत कर लेते हैं। उल्लेखनीय है कि पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश के भूजल में आर्सेनिक ज्यादा पाया जाता है। आर्सेनिक एक ऐसा रसायन है जो 'त्वचा कैंसर' के लिए कारणीभूत होता है। जापानी वैज्ञानिकों की यह खोज 'प्रोसीडिंग्स ऑफ नेशनल अकेडेमी ऑफ साइंसेज जर्नल' में प्रकाशित भी हो चुकी है। जापानी वैज्ञानिकों ने पाया कि चावल के पौधे में मौजूद दो प्रोटीन आर्सेनिक को चावल तक पहुँचने में सर्वाधिक जिम्मेदार होते है। दोनों ही प्रोटीन पौधे की जडों में होते है। इनमें से एक प्रोटीन LSi1 आर्सेनिक को जडों से खींचता है, जबकि दूसरा प्रोटीन LSi2 उस आर्सेनिक का बहाव तने और चावल के दाने तक पहुँचाता है।

आर्सेनिक एक वैश्विक समस्याः

विषाक्त पदार्थों और रोग रजिस्ट्री, एजेंसी (एटीएसटीडीरआर-2011) की रिपोर्ट के अनुसार आर्सेनिक को वातावरण के खतरनाक रसायनों की सूची में प्रथम स्थान दिया गया है। दुनिया भर में करीब 14 करोड लोग आर्सेनिक प्रदूषण से पीडित है। यह तत्व भूजल में घुलित लवणों के रूप में पाया जाता है। इसकी उपस्थिति की वजह से पानी के रंग या गंध में कोई फर्क नहीं दिखता। आर्सेनिक युक्त पानी पीने से आर्सेनिक शरीर में धीरे-धीरे जमा हाता रहता है और असर बहुत दिनों बाद ही नजर आते है। भूमिगत जल में आवश्यकता से अधिक आर्सेनिक की मात्रा होने के कारण उनके सेवन से होने वाली बीमारियों को आर्सीओनिक कहा जाता है। त्वचा पर मिलेनोसिस, किरेटोसिस और हाइपरपिगमंटेशन आर्सेनिक विषाक्ता प्रकट होने के मुख्य संकेत है। यह शरीर में विभिन्न प्रकार के कैंसर जनित रोग और मस्तिष्क संबंधी विकार

भी उत्पन्न करती है। आर्सेनिक को रक्तवाहिनियों व इम्यून सिस्टम से जुडे रोगों का भी कारण बताया गया है व प्रजनन संबंधी दिक्कतें भी पैदा करता है। आर्सेनिक से दूषित भूजल का उपयोग का जोखिम एक वैश्विक स्वास्थ्य चिंता का विषय है। अंतराष्ट्रीय स्वास्थ्य संगठन ने अर्जेन्टाइना, आस्ट्रेलिया, बांग्लादेश कनाडा, चिली, चीन, ग्रीस, हंग्री, भारत, जापान मैक्सिको, मंगोलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका, फिलीपीन्स, ताइवान, थाइलैंड, अमेरिका, रूस तथा ताईवान आदि देशों के लोगों पर किये गये अध्ययन से जानकारी दी है कि आर्सेनिक युक्त पानी पीने से यकृत, फेफडे, मूत्राशय, और त्वचा के कैंसर का कारण बन सकता है। हाल ही में बांग्लादेश और चिली में किये गये अध्ययन से पता चला है कि जहाँ पर उच्च स्तर पर पानी में आर्सेनिक (200 से 800 पीपीबी) था वहां लोगों में हृदय रोग से संबंधित मृत्यु दर बढ गयी थी। गर्भावस्था में पल रहे शिशु और बालकों में संवेदनशील विकास की अवधि के दौरान विषैले पदार्थो से दूषित पर्यावरण से बच्चों के स्वास्थ्य में गंभीर परिवर्तन हो सकते है। आर्सेनिक गर्भावस्था के दौरान माँ के अंदर पल रहे भ्रूण में गर्भनाल के माध्यम से पहुँच जाता है। आर्सेनिक युक्त पानी पीने से गर्भवती महिलाओं में गर्भपात, शिशु मृत्यु दर, अपरिपक्व जन्म, जन्म के समय कम वजन और गर्भावस्था और जन्म परिणामों पर हानिकारक प्रभाव मिले है। बच्चों में दिमाग से संबंधित भी बीमारियां पायी गई है जैसे सीखने व याद रखने की कम क्षमता आदि। एक अध्ययन से यह भी पाया गया है कि पुरूषों की अपेक्षा महिलाएं आर्सेनिक से संबंधित बीमारियों के लिये ज्यादा संवेदशील होती है। जापान के ओकायामा प्रान्त में किये गये एक सर्वेक्षण से देखा गया कि पांच साल तक बच्चों में बढी हुई कैंसर मृत्यु दर और विशेष रूप से त्वचा के कैंसर, अग्नाशय के कैंसर, ल्यूकीमिया और यकृत कैंसर से मृत्यु का कारण आर्सेनिक जहर से दूषित दूध पाउडर था। गर्भावस्था के दौरान महिलाओं को अपने खानपान के प्रति अति सजग होना पडता है। जरा सी लापरवाही न सिर्फ उनके लिए बल्कि गर्भ में पल रहे शिशु की सेहत के लिए भी हानिकारक हो सकती है। खासतौर पर पीने के पानी को लेकर एहतियात बरती जानी और भी जरूरी होती है। एक ताजा अध्ययन में इस बात की पुष्टि हुई है कि अगर गर्भवती महिला शुद्व पानी न पिये, तो शिशु को गंभीर समस्याएं हो सकती है। इस अध्ययन में कहा गया है कि गर्भावस्था के दौरान आर्सेनिक युक्त पानी के सेवन से बच्चों में श्वसन संबंधी संक्रमण का खतरा बढ सकता है। यूनिवर्सिटी ऑफ वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया ने आर्सेनिक मिले पानी से श्वास की बीमारी होने की बात कही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के स्वास्थ्य पर्यावरण शोधकर्ता कैथरीन रामसे ने पत्रिका एंवायरमेंटल हेल्थ परस्पेक्टिव को बताया, कि आर्सेनिक को कैंसर के कारक के रूप में जाना जाता है। फेफडे पर इसके खतरनाक प्रभाव के बारे में अभी तक जानकारी नहीं थी लेकिन हाल ही के अध्ययन में कैंसर के प्रमाण मिले है। आर्सेनिक दूषित पानी पर्यावरण और स्वास्थ्य के लिए बडी समस्या है। इससे दुनिया भर में लाखों लोग प्रभावित होते है।

आर्सेनिक विषाक्तता कितनी मात्रा तक हानिकारक नहीं होगी इसका मापदण्ड बदलता रहा है। कुछ समय पहले पीने वाले पानी में 50 पीपीबी आर्सेनिक को होना सुरक्षित माना जाता था लेकिन

ताइवान में इस प्रकार के पानी से कई हजार लोग बीमार हो गये। अतः विश्व स्वास्थ्य संगठन को यह मानक 10 पीपीबी करना पडा इससे अधिक मात्रा कैंसर तथा अन्य हानिकारक प्रभावों को पैदा करती है। अन्य देशों की तुलना में बांग्लादेश में अकार्बनिक विषाक्तता प्राकृतिक स्रोतों से आ रही है। अनिवार्य समस्या सरकार की अदूरदर्शिता तथा लापरवाही के कारण अधिक हो रही है। उदाहरणार्थ विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित मानकों को न मानकर वहाँ अभी 50 पीपीबी आर्सेनिक युक्त पानी का प्रयोग किया जा रहा है। लगभग पाँच से छः करोड लोग 10 पीपीबी आर्सेनिक युक्त जल तथा लगभग चार करोड लोग 50 पीपीबी आर्सेनिक युक्त जल का प्रयोग कर रहे है। इस प्रकार लगभग नौ करोड लोग आर्सेनिक विषाक्तता से ग्रसित है। कहीं-कहीं तो इसकी मात्रा 3000 से 10000 पीपीबी तक पहुँच गई है जो कि अत्यन्त हानिकारक है। आर्सेनिक विषाक्तता का प्रभाव केवल बांग्लादेश में ही नहीं है भारत में भी इसका प्रकोप जारी है।

भारतः आर्सेनिक से दूषित जल व स्वास्थ्य पर प्रभाव-

भूजल में आर्सेनिक की विषाक्तता दुनिया भर में एक बडी चिन्ता का विषय है। भारत के सात राज्य - पश्चिम बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, झारखंड, छत्तीसगढ, असम और मणिपुर आर्सेनिक के प्रदूषण से ग्रस्त है। गंगा का पानी कभी सबसे स्वच्छ होता था इसलिए वेदों-पुराणों तक में कहा गया है - गंगा तेरा पानी अमृत। मान्यता थी कि इसे पीकर या इसमें डुबकी लगाकर बीमारियां दूर हो जाती है। लेकिन अब स्थिति उलट है। गंगा के इर्द-गिर्द बढते शहरीकरण, उद्योग

धंधों से निकलने वाले कचरे, प्रदूषणकारी तत्वों के बढने के कारण गंगाजल में आर्सेनिक का जहर घुल गया है। देश के कई भागों में आर्सेनिक युक्त जल पीने के कारण लोग कैंसर की चपेट में आ रहे है। पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश तथा बिहार के अनेक गांवों में भूजल में आर्सेनिक तत्व पाये जाने की पुष्टि वैज्ञानिकों ने की है। असम के धेमा जी और झारखंड के साहिबगंज जिले के ज्यादातर भागों में लोग कुओं का पानी पीने की वजह से आर्सेनिक की समस्या झेल रहे हैं। मणिपुर में 9 में से 4 जिलों में आर्सेनिक संदूषित

भारत के कुछ राज्यों में भूजल में उच्च आर्सेनिक की मौजूदगी		
राज्य	**जिला**	**ऐसे ब्लॉक जहां के भूजलों के प्रेक्षण व कुओं में उच्च आर्सेनिक पाया गया**
असम	धेमाजी	धेमाजी, बोडौरडलोनी, सीसीबारेगांव
बिहार	भोजपुर	बरहेरा, शाहपुर, कोइलवर, आरा, बिहिया, उदवंतनगर
	पटना	मनेर, दानापरू, बिख्तयरपुर, बाढ
	बेगुसराय	मिटहानी, बेगुसराय, बरौनी, बिलया, साबेपुरकमाल, बचवारा
	खगडिया	खगिडया, मानसी, गोगरी, पर्बता
	समस्तीपुर	मोहिनुदुन नगर, मोहनपुर, पटौरी, विध्यातिनगर
	भागलपुर	जगदीशपुर, सलतानगंज, नाथनगर
	सरन	छिंदवाडा, छपरा, रेबेलगंज, सोनपुर
	मुंगेर	जमालपुर, धरेहरा, बिरयापुर, मुंगेर
	कटिहार	मन्साही, कुरसेला, समेली, बरारी, मिनहारी, अमदाबाद
	बक्सर	ब्रहमापुर, सिमारी, चक्की, बक्सर
	वैशाली	राघोपुर, हाजीपुर, बिदूपुर, देसरी, साहदेई, बुजुर्ग
	दरभंगा	बिरौल
	पूर्णिया	पूर्णिया पूर्व, कस्बा
	किशनगंज	किशनगंज, बहादरगंज
	लखीसराय	पिपरिया, लखीसराय
छत्तीसगढ	राजनंदगांव	चौकी
	मलदा	इंग्लिश बाजार, मानिकचाक, कलियाचाक-1,2 एवं 2,1, रतुआ-1 एवं 2 2 1 एवं रतुआ
पश्चिम बंगाल	मुशिर्दाबाद	श्रानीनगर-1 एवं 2, दोमकल , नौदा, जलागी ? हिरहरपाडा, सूती-1 एवं 2, भगवानगोला-1 एवं 2
	निदया	करीमपुर-1 एवं 2, तेहट्टा- 1 एवं 2, कालीगंज, नवाद्वीप, हारीनघाटा, चकदा, शांतिपुर, नक्सीपारा
	उत्तरी 24	हाबडा-1 एवं 2, बारासात -1 एवं 2, राजरहाट, देगंगा, बेदुरिया, गायघाट, आमडांगा, बागदा, बोनगांव
	दक्षिणी 24	बरूईपुर, सनारपुर, भांगर 1 एवं 2, जौयनगर 1, विष्णुपुर 1 एवं 2, परबस्थली 1 एवं 2, कटवा 1 एवं 2
	हावडा	डलुबेरिया 2 और शामपुर 2

श्रोतः केंद्रीय भूमि जल बोर्ड और आर्सेनिक कार्यदल (मार्च 2008)

*** केवल कुछ स्थानों पर**

पानी है। राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान रूडकी के निदेशक डा0 आर0 डी0 सिंह ने यूनीवार्ता को बताया कि पश्चिम बंगाल के कई गांवों में पीने के पानी में प्रति लीटर 3.20 मि.ग्रा. आर्सेनिक पाया गया है, जो सरकार द्वारा निर्धारित मानक से 64 गुना अधिक है। उन्होने बताया कि आर्सेनिक एक ऐसा विषैला तत्व है, जिसका अधिक मात्रा में सेवन किया जाए तो कैंसर उत्पन्न कर देता है। पश्चिम बंगाल के मालदा, मुर्शिदाबाद, वर्धमान, नाडिया, हावडा, हुगली, उत्तर 24 परगना, दक्षिण 24 परगना और कोलकाता जिलों के लोग इस पानी को पीने से विभिन्न रोगों के शिकार हो रहे हैं।

डा. घोष ने बताया कि बिहार में 15 जिलों के 57 ब्लाकों में आर्सेनिक की मात्रा सरकार द्वारा निर्धारित मानक से अधिक पाई गई है। ये जिले है - बक्सर, भोजपुर, पअना, खगडिया, लखीसराय, सारन, बैशाली, बेगुसराय, समस्तीपुर, मुंगेर, भागलपुर, दरभंगा, पूर्णिया, कटिहार, और किशनगंज। उन्होंने बताया कि उत्तर प्रदेश में तीन जिलों के 7 ब्लॉकों के 69 गांवों के भूजल में आर्सेनिक पाए जाने की पुष्टि वैज्ञानिकों ने की है। ये जिले है- बलिया, गाजीपुर तथा वाराणसी। बलिया में राजपुर इकौना जैसे 310 गांवों की 3.5 लाख की आबादी आर्सेनिक वाला पानी पीने को मजबूर है बलिया सहित पूर्वी उत्तर प्रदेश के सात जिलो-खीरी (165 गांव), बहराइच (438 गांव), बरेली (14 गांव), गोरखपुर (45 गांव), गाजीपुर (24 गांव) और चंदौली (19 गांव) के 1,018 गांव आधिकारिक तौर पर आर्सेनिक वाले पानी से पीडित है, इन जिलों की तादाद जल्द ही और बढेगी। जादवपुर विश्व विद्यालय के स्कूल ऑफ एन्वायर्नमेंट स्टडीज (एसईएस) की जाँच में पाया गया कि वाराणसी, इलाहाबाद और कानपुर का भू-जल भी आर्सेनिक की चपेट में आ गया है। इलाहाबाद के लैलापुर कलां में आर्सेनिक का स्तर 707 पीपीबी और कानपुर से सटे उन्नाव के शुक्लागंज में आर्सेनिक की मौजूदगी 316 पीपीबी तक के बेहद खतरनाक स्तर तक पहुंच गई है। यानी पूरा राज्य आर्सेनिक के कारण अर्सिनोकोसिस, किरेटोसिस, फेफडे, त्वचा, गुर्दे और मूत्राशय के कैंसर सरीखी गंभीर बीमारियों की ओर बढ रहा है। झारखंड के 68 गांव असम में 9 ब्लॉक, मणिपुर में 4 जिले और छत्तीसगढ के 4 गांव ऐसे पाये गए है। जिनमें भूजल आर्सेनिक के कारण प्रदूषित हो चुका है। डा0 घोष ने बताया कि आर्सेनिक युक्त जल के निरंतर सेवन से देश के 36 जिलों में लोग शारीरिक कमजोरी, थकान, तपेदिक (टी.बी.), श्वास संबंधी रोग, पेट दर्द, जिगर एवं प्लीहा में वृद्वि, खून की कमी, बदहजमी, वनज में गिरावट, आंखों में जलन, त्वचा संबंधी रोग तथा कैंसर जैसी बीमारियों की चपेट में आ चुके है। उत्तर प्रदेश, बिहार तथा पश्चिम बंगाल में गंगा के किनारे बसने वाले लोगों में भारी संख्या में आर्सेनिक से जुडी बीमारियां हो रही है। डब्ल्यूएचओ ने अकेले

पश्चिम बंगाल में ही 70 लाख लोगों आर्सेनिक जनित बीमारियों के चपेट में होने का आंकलन किया है। कानपुर से आगे बढने पर गंगा में आर्सेनिक का जहर घुलना शुरू हो जाता है। कानपुर से लेकर बनारस, आरा, भोजपुर, पटना, मुंगेर, फर्रखा तथा पश्चिम बंगाल तक के कई शहरों में गंगा के दोनों तटों पर बसी आबादी में आर्सेनिक से जुडी बीमारियां बढ रही है। बिहार में तो पटना सहित 12 जिलो के लोग आर्सेनिक युक्त जहरीला पानी पीने के लिए मजबूर है। आर्सेनिक युक्त पेयजल के कारण गैंग्रीन, आंत, लीवर, किडनी और मूत्राशय के कैंसर जैसी जानलेवा बीमारियां हो रही है। भोजपुर, बिहार में सबसे अधिक आर्सेनिक प्रभावित जिलों में से एक है। बिहार में कराये गए एक सर्वे में 15 जिलों के भूजल में आर्सेनिक के स्तर में खतरनाक वृद्वि दर्ज की गई थी। आर्सेनिक प्रभावित 15 जिलों के 57 विकास खंडो के भूजल में आर्सेनिक की भारी मात्रा पायी गई थी। सबसे खराब स्थिति भोजपुर, बक्सर, बैशाली, भागलपुर, समस्तीपुर, खगडिया, कटिहार, छपरा, मुंगेर और दरभंगा जिलों में है। समस्तीपुर के एक गाँव हराईछापर में भूजल के नमूने में आर्सेनिक की मात्रा 2100 पीपीबी पायी गई जो कि सर्वाधिक है। सरकार द्वारा हाल में कराए गए कई विशेष अध्ययनों में इन क्षेत्रों में गंगाजल में आर्सेनिक की मात्रा सीमा से ज्यादा पायी गई है। डब्ल्यूएचओ के मानकों के अनुसार पानी में आर्सेनिक की मात्रा प्रति अरब 10 पीपीबी से ज्यादा नही होनी चाहिए। लेकिन शोध बताते है कि यह इन क्षेत्रों में पानी में आर्सेनिक की मात्रा 10 पीपीबी से कई गुना तक अधिक पायी गयी। इन क्षेत्रों में बसे लोग गंगा के पानी के सेवन से आर्सेनिक से जुडी बीमारियों की चपेट में आ रहे है। इनमें दाँतों का पीलापन, दृष्टि कमजोर, बाल जल्दी पकने लगना, कमर टेढ़ी होना, त्वचा संबंधी बीमारियां प्रमुख है। कुछ अन्य शोधों से आर्सेनिक के चलते कैंसर, मधुमेह, लीवर को क्षति पहुंचने जैसी बीमारियां बढने की भी खबर है। प्राकृतिक रूप से पैदा हुई विषाक्तता को रोकना उतना आसान नहीं होता लेकिन अधिकतर कल कारखानों से पैदा कुप्रभाव को रोकने में हमारी लापरवाही तथा कुप्रबन्धन ही है। मानव द्वारा प्रदत्त प्रदूषण अधिक हानिकारक है जिसके लिए कोई विशेष व्यवस्था नही की गई। ज्वालामुखी वाले क्षेत्रों में जलोद तथा सरोवरी निक्षेप आर्सेनिक के मुख्य स्रोत है। इसके अतिरिक्त कल कारखानों का अपशिष्ट, खनिज उत्पाद कारखाने, कीटनाशकों का अनियंत्रित प्रयोग

केन्द्रीय भूजल आयोग की रिपोर्ट बताती है कि देश के चार राज्यों के 26 जिलों के भूमिगत जल में आर्सेनिक की मात्रा उचित सीमा 0.01 मिलीग्राम प्रति लीटर से अधिक है. पश्चिम बंगाल का मुर्शिदाबाद जिला पानी में आर्सेनिक के होने का सबसे ज्यादा शिकार है।

तथा पृष्ट जल भी आर्सेनिक विषाक्तता प्रदान करते है। प्राकृतिक विषाक्तता तो सीमित है लेकिन मानव निर्मित विषाक्तता अधिक भयावह है। अतः इसके रोकने के सार्थक प्रयास की आवश्यकता है। जहाँ भी कारखानों की अधिकता है वहां पर भौम तथा पृष्ट जल दोनों ही प्रभावित होते रहे है। वृंदावन पैलिएटिक केयर सेंअर के डा0 संजय पिशारोडी के अनुसार आर्सेनिक और नाइट्रेट के कारण मनुष्य का इम्यून सिस्टम प्रभावित होता है। इससे समय से पहले वृद्वावस्था के लक्षण नजर आते है। इम्यून सिस्टम प्रभावित होने पर मस्तिष्क में कैंसर का खतरा बढ जाता है व आर्सेनिक से टाइप दो की डायबटीज का भी खतरा बढ जाता है।

प0 बंगाल और बिहार राज्यों में आर्सेनिक संदूषित

ब्लॉक कार्यबल/राज्य सरकार के निष्कर्षों पर आधारित है। उत्तर प्रदेश, असम, छत्तीसगढ राज्यों के मामले में आर्सेनिक संदूषण की पहचान केंद्रीय भूमि जल बोर्ड और राज्य भूमि जल विभागों के निष्कषों के आधार पर की गई है।

यह भी एक बडी त्रासदी ही है। आजतक इन समस्याओं का निदान नहीं हो पाया। सरकार किसी ठोस नतीजों पर नही पहुंच पायी है। हवा के बाद जल जीवन की सबसे बडी जरूरत है लेकिन यह पीने के लायक नहीं है। मानव के लिए यह आज सबसे बडी चुनौती है। वैज्ञानिकों के अनुसार शुद्व पेयजल आपूर्ति एवं पौष्टिक आहार के जरिये इसके प्रभाव को कम किया जा सकता है लेकिन सुदूर गाँवों तक शुद्ध पेयजल मुहैया कराने में सभी सरकारें विफल रही है। आर्सेनिक से संबंधित होने वाली बीमारियों का प्रभाव गरीब लोगों पर अधिक पाया गया है जबकि अमीरों पर इसका प्रभाव कम है। इसकी मूल वजह खान-पान है। सम्पन्न एवं पढ़े-लिखे लोगों के भोजन में दूध-दही साग-सब्जी एवं फल की मात्रा गरीबों के अपेक्षाकृत अधिक हुआ करती है। पौष्टिक भोजन के जरिये इसके प्रभावों को कम किया जा सकता है।

उपाय व शोधः

जहाँ भी आर्सेनिक प्रदूषण है विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों की आबादी में जल शुद्विकरण की विधियाँ बतायी जायें तथा जनता को जागरूक किया जाये। प्रयोगों द्वारा पाया गया है कि सक्रिय एल्यूमिनियम तथा आयरन ऑक्साइड की परत युक्त बालू से पानी छानने से आर्सेनिक विषाक्तता 5 पीपीएम तक कम की जा सकती है। नदी के पानी को साधारण बालू से छानकर भी आर्सेनिक की मात्रा को कम किया जा सकता है। यह विधि असुविधाजनक हो सकती है। अतः छानक पात्रों का निर्माण किया गया है। जिससे पानी शुद्ध हो जाता है लेकिन विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानक के अनुसार नहीं। सबसे उचित विधि तो यह है कि समय-समय पर नलकूपों का परीक्षण किया जाय और गहरें कुएँ खोदे जायें। औषधीय व्यवस्था का विकास किया जाये जिससे आर्सेनिक प्रभावित व्यक्तियों का उपचार किया जा सके। जिस क्षेत्र में आर्सेनिक विषाक्तता है वहाँ पर कृषि कार्य न किया जाए अन्यथा कृषि उत्पादों में आर्सेनिक की मात्रा चली जायेगी। इस प्रकार वातावरण में आर्सेनिक विषाक्तता बहुत हद तक कम की जा सकती है। 96 वीं विज्ञान कॉंग्रेस में भाग लेने आये श्री ब्रह्ममचारी ने बताया कि सीएसआईआर ने ऐसे पौधों की खोज में है जो अन्न के रूप में अनुपयोगी हों लेकिन जमीन से आर्सेनिक की मात्रा ज्यादा है वहाँ इनको भारी मात्रा में उगाया जाये ताकि पौधे आर्सेनिक की अधिकतम मात्रा जमीन और भूजल से सोख लें और पानी को आर्सेनिक मुक्त किया जा सके।

डॉक्टर दीपांकर चक्रवर्ती यह भी कहते है कि जमीन के अंदर का पानी इस्तेमाल करना ही मानव की भूल थी, 'पूरी हरित क्रांति जमीन के नीचे के पानी पर ही आधारित थी लेकिन आज हम नतीजा देख रहे है कि कितने लोग आर्सेनिक से जुडी बीमारियों से परेशान है।'

आर्सेनिक प्रभावित देशों की सरकार को चाहिए कि सस्ते जल शोधक उपकरण प्रदान करे तथा बडे संयंत्र लगाकर जल शुद्ध करवायें। इन संयंत्रों में

आर्सेनिक +3 को आर्सेनिक +5 में हाइड्रोजन परमाणु या क्लोरीन द्वारा बदला जाता है। इसके उपरांत विपरीत रसाकर्षण तथा एनायन विनिमय या सक्रिय एल्यूमिना पर अधिशोधित किया जाता है। इसके पश्चात छानने से आर्सेनिक मात्रा कम अथवा पूर्णतया समाप्त हो जाती है।

खोज द्वारा यह पाया गया है कि प्रतिदिन 400 पीपीबी फालिक अम्ल की खुराक रक्त में आर्सेनिक की मात्रा को 14 प्रतिशत तक कम कर सकती है। अन्य उपचार जैसे कीलेशन द्वारा भी शरीर में व्याप्त आर्सेनिक को कम किया जा सकता है। आर्सेनिक युक्त जल को अगर खुली धूप में 12-14 घंटे तक रख दिया जाये तो उसमें से 50 फीसदी आर्सेनिक उड जाता है। उसके बाद उस जल का इस्तेमाल पेयजल के रूप में किया जा सकता है। इसके अलावा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए जा रहे प्रयासों के तहत बंगाल कालेज आफ इंजीनियरिंग ने कम्युनिटी एक्टिव एलुमिना फिल्टर का निर्माण भी किया है जो पानी से आर्सेनिक निकालने में मद्दगार साबित हो सकता है।

ब्रिटेन के बेलफास्ट स्थित क्वींस युनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने भी ऐसी किफायती तकनीक विकसित करने का दावा किया है, जिससे आर्सेनिक संदूषित जल की समस्या से निजात मिल सकती है। इस परियोजना के समन्वयक भास्कर सेनगुप्ता ने कहा, 'क्वींस के शोधकर्ताओं' द्वारा तैयार की गई यह तकनीक पर्यावरण के अनुकूल, इस्तेमाल में सरल, किफायती और ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध कराई जा सकने वाली दुनिया की एकमात्र तकनीक है।' यह तकनीक आर्सेनिक संदूषित भूमिगत जल के एक हिस्से को पारगम्य पत्थरों में रिचार्जिग पर आधारित है। इन पत्थरों में जल धारण करने की क्षमता होती है। इस तकनीक से पानी में आर्सेनिक की मात्रा धीरे-धीरे कम होने लगती है। इस तरह के वैज्ञानिक दावों से उम्मीद की डोर तो बांधी जा सकती है, पर पानी के प्रति सरकारों और पानी के संगठनों की जिम्मेदारी थोडा ईमानदारी से निभानी होगी, तभी शायद कोई रास्ता निकले। दक्षिण कोरिया में विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी के पोहांग विश्वविद्यालय के एक वैज्ञानिक दल ने आरजीओ यानी अवकृत ग्रेफीन ऑक्साइड एवं मैग्नेटाइट से बने एक संश्लिष्ट पदार्थ का उपयोग पेय जल में से आर्सेनिक को हटाने में किया है।

ग्रेफीन कार्बन परमाणुओं की केवल एक परमाणु मोटाई की चादर होती है जो ऑक्साइड के रूप में भी पाई जाती है। अवकृत ग्रेफीन ऑक्साइड इस पदार्थ की एक ऐसी रासायनिक अवस्था है जिसमें इसने इलेक्ट्रॉन ग्रहण कर लिए होते है। अन्वेषकों ने आर्सेनिक युक्त जल में एक मैग्नेटाईट-आरजीओ संश्लिष्ट छितराया। आरजीओ संश्लिष्ट ने जल से आर्सेनिक को अवशोषित कर लिया और फिर इसको जल से स्थायी चुंबकों का उपयोग करके हटा लिया गया।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के पोहांग विश्वविद्यालय के अन्वेषकों ने अवकृत ग्रेफीन ऑक्साइड आधारित एक नए प्रकार का मैग्नेटाइट सम्मिश्र तैयार किया है। यह संकर पदार्थ जो कमरे के ताप पर परम अनुचुंबकीय होता है, जल के नमूने से 99.9 फीसदी आर्सेनिक को दूर कर सकता है और इसकी मात्रा को एक अरब भाग में एक भाग से कम से स्तर तक ला सकता है। केवल मैग्नेटाइट की तुलना में यह नया

सम्मिश्र आर्सेनिक हटाने के लिए बेहतर है क्योंकि मैग्नेटाईट कणों के बीच-बीच में ग्रेफीन की परतों की उपस्थिति से आर्सेनिक अवशोषक स्थलों की संख्या बढ जाती है। अवकृत ग्रेफीन ऑक्साइड के कारण मैग्नेटाईट भी अधिक स्थाई हो जाता है जिससे यह सतत प्रवाह प्रणालियों में भी अधिक लंबे समय के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। अब राष्ट्रीय वनस्पति शोध संस्थान के वैज्ञानिकों ने एक शोध के दौरान इस समस्या से निजात दिलाने के रास्ते निकाल लिए है। संस्थान के वैज्ञानिकों ने वैसे जीन का पता लगा लिया है जो सिंचाई के बाद आर्सेनिक के स्तर को कम करने के साथ-साथ उसे अनाज व सब्जियों में पहुंचने से रोकने में सफल होगा। इस शोधकार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले वैज्ञानिक डा. देवाशीष चक्रवर्ती ने कहा, 'यह शोध प्लांट डिफेंस मैकेनिज्म को आधार बनाकर किया गया है। शोध में जीन के उन लक्षणों का पता लगाया गया है जो पौधों में आर्सेनिक को जडों से आगे बढने ही नहीं देगा'। उन्होंने कहा 'फिलहाल यह शोध धान के पौधों पर किया गया है। लिहाजा शोध के दौरान ऐसे जीन की जानकारी मिली जो धान के पौधें में पहुंचने वाले आर्सेनिक को दोबारा वातावरण में उत्सर्जित कर रहा था।' वैज्ञानिकों का कहना है कि इस विधि से तैयार बीजों को बोने से आर्सेनिक की मात्रा अनाज तक नही पहुंच सकेगी।

सुंजन एमरोंज के नेतृत्व में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के एक दल ने कोलकाता के दक्षिण में स्थित एक ग्रामीण हाईस्कूल में इस टेक्नालॉजी का परीक्षण कर लिया है और वे अब इसे थोडे बड़े पैमाने पर आजमाने जा रहे है। एमरोंज के दल ने एक टंकी बनाई है जिसमें एक बार में करीब 600 लीटर पानी भरा जा सकता है। टंकी में अंदर स्टील प्लेट्स लगी हुई हैं। इन प्लेट्स में से हल्का वोल्टेज प्रवाहित किया जाता है जिसकी वजह से इन पर जंग जल्दी लगता है। पानी में उपस्थित आर्सेनिक इस जंग से क्रिया करके अघुलित अवस्था में पहुंच जाता है और टंकी के पेंदे में बैठ जाता है। टंकी का पानी पीने के लिए सुरक्षित होता है। इस संयंत्र से प्रतिदिन 10,000 लीटर पानी मिलता है। इस तकनीक में एक समस्या यह है कि रोजाना जो आर्सेनिक युक्त कीचड निकलेगा उसका क्या किया जाए। इसे यहां-वहां फेंक दिया तो इसके वापिस भूजल में पहुंचने या सूखकर हवा में उडने की आशंका है। समस्या से निपटने के लिए टीम ने स्थानीय निर्माण उद्योग के साथ एक योजना बनाई है। विचार यह है कि कीचड को कंक्रीट में मिलाकर सडकें बनाने में उपयोग कर लिया जाए। परीक्षणों से पता चला है कि आर्सेनिक युक्त कीचड मिलाने पर कंक्रीट हानिकारक नहीं बनाता। अब यह समझने के प्रयास हो रहे हैं कि इसका असर कांक्रीट की मजबूती पर पड़ता है या नही।

भारत सरकार के प्रयासः

यादव ने कहा कि केंद्र सरकार इस समस्या से निपटने के लिए आर्सेनिक बहुलता वाले स्थानों पर ट्रीटमेंट प्लांट लगा रही है। राज्यों को इसके लिए मद्द दी जा रही है। राज्यों को कहा गया है कि आर्सेनिक बहुलता वाले स्थानों में गंगा के पानी के ट्रीटमेंट के बाद ही उसे स्थानी लोगों को पीने के लिए सप्लाई किया जाए। असल में अभी ऐसे प्लांट कम है जिस कारण सीधे लोग इस पानी को गंगाजल समझकर पी रहे है और बीमारियों की चपेट में आ रहे

है।

विभिन्न इलाकों में खतरे की सम्भावना वाले हैण्डपम्पों पर लाल 'क्रॉस' का निशान लगाया जा रहा है ताकि उसका पानी लोग उपयोग न करें, इसी प्रकार कुछ अन्य जिलों में गहरे हैण्डपंप खुदवाये जा रहे है। बलिया जिले में तो जगह-जगह बोर्ड लगाकर हिदायत दी जा रही है कि यहां का पानी पीना मना है और साथ की गंगा किनारे के गांवों के 117 पंपों पर लाल निशान लगाए गए है।

हालात की गंभीरता को देखते हुए सरकार ने अब बलिया में आर्सेनिक प्रभावित क्षेत्रों को शुद्वपानी उपलब्ध कराने के लिए 225 करोड की लागत से ट्रीटमेंट प्लांट स्थापित करने की मंजूरी दे दी है।

वर्तमान में सिर्फ पश्चिम बंगाल ही एक ऐसा राज्य है जहां भू-जल को पीने योग्य बनाने के लिए एक योजना चलाई गई है। राज्य सरकार का लक्ष्य है कि सन् 2013 तक हर रिहायशी इलाकों में कम से कम एक 'आर्सेनिक मुक्त जल स्रोत' अवश्य उपलब्ध करायेंगे।

लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग नलकूपों में आर्सेनिक निष्कासन उपकरण लगायेगा, जो 5000 परिवारों को आपूर्ति कर सकता है। यह उपकरण फिटकरी अथवा ब्लीचिंग पाउडर के द्वारा पानी की प्रारंभिक सफाई करता है और फिर यह पानी एक लौह अयस्क हेमेटाइट की परत से गुजारा जाता है। इसके बाद पानी एक दूसरी टंकी में जाता हैं, जहां तलछट जमाव विधि द्वारा आर्सेनिक को अलग किया जाता है। तीसरी टंकी में रेत की मोटी परत के माध्यम से बचा हुआ आर्सेनिक भी छन जाता है। इस तरह पानी इस्तेमाल के लिए तैयार होता है।

आर्सेनिक की सफाई का एक दूसरा विकल्प है- एकल चरण फिल्टर। इसे कोलकाता स्थित अखिल भारत जन स्वास्थ्य एवं स्वच्छता संस्थान के सेनेटरी इंजीनियरिंग विभाग द्वारा विकसित किया गया है। इसमें फिटकरी को पानी में मौजूद लौह तत्व और आर्सेनिक अलग हो जाते है। फिर इसे निथरने के लिए छोड दिया जाता है। इस तरह से फिल्टर किया गया पानी, इस्तेमाल के योग्य होता है।

अभी हमारे यहाँ इतनी जागरूकता नहीं पैदा की गई और न ही कोई विशेष उपाय किये गये। समय रहते ही लोग विदेशों में हो रहे अनुसंधानों तथा संयंत्रों का उपयोग प्रारंभ कर दे तो इस विभीषिका से निजात पा सकते है। अन्यथा हमारे यहां भी आर्सेनिक विषाक्तता महामारी का रूप धारण कर लेगी। इसमें सरकार तंत्र की जागरूकता तथा उचित प्रबन्धों की आवश्यकता है।

आर्सेनिक रोचक तथ्य

आर्सेनिक ट्राईओक्साइड को संख्या नाम से भी जानते हैं

धातुओं के निष्कर्ष से सम्पूर्ण विश्व में लगभग 100,00 टन आर्सेनिक का उत्पादन होता है

क्लोरोविनायल डाईक्लोरोआर्सीन (यह भी लेविसिट के रूप में जाना जाता है) 1920 के दशक में एक रासायनिक युद्ध फोड़ा के रूप में विकसित किया गया था जिसका उपयोग विश्व युद्ध के दौरान किया गया था यह संयुक्त राज्य अमेरिका में 1950 के दशक में अप्रचलित घोषित किया गया था

आर्सेनोबीटेन और आर्सेनोकोलीन जैविक रूप हैं जिन्हे मछली आर्सेनिक के रूप में जाना जाता है

मानव शरीर में अकार्बनिक आर्सेनिक की अर्द्ध आयु 10 घंटे होती है

सामान्य मनुष्य में उपस्थित आर्सेनिक की मात्रा

—1 माइक्रोग्राम/ली (रक्त), —100 माइक्रोग्राम/ली (मूत्र)

—1 पीपीएम (नाखून),—100 पीपीएम (बाल)

डब्ल्यू एच ओ द्वारा पीने के पानी में जायज आर्सेनिक की मात्रा 0.01 पीपीएम

बांग्लादेश के पीने के पानी में जायज आर्सेनिक की मात्रा 0.05 पीपीएम आर्सेनिक के आइसोप्टोप्स: As-71, As-72,As-73,As-74,As-75,As-76,As-77,As-79

सुर्खियों में आर्सेनिक पर शोधः

फरजाना इस्लाम व जोनाथन लॉयड के नेचर पत्रिका में छपे शोध पत्र में लिखा है कि हमने प्रयोगशाला में पाया कि हवा के बगैर और कार्बन की मौजूदगी में जो बैक्टीरिया जमीन के नीचे के लोहे को खाते हैं, वो पानी में आर्सेनिक छोडते हैं, जोनाथन लॉयड ने कहा, 'यह बैक्टीरिया अपनी उर्जा के लिए जमीन के भीतर मौजूद खनिजों को अवशोषित करते है, लेकिन डा0 चक्रवर्ती कहते है कि यह भी कई सिद्वान्तों में से एक है, आर्सेनिक के पानी में पहुँचने की प्रक्रिया बहुत जटिल है और अभी इस पर किसी सही निष्कर्ष तक पहुंचने में और समय लगेगा।

कैलीफोर्निया की एक झील में एक बैक्टीरिया खोजा गया है जो संभवतः जीवन के रसायन शास्त्र के बारे में नए सिरे से सोचने को मजबूर कर देगा। इस झील का पानी आर्सेनिक से भरपूर है। कैलीफोर्निया झील के इस बैक्टीरिया की एक खासियत यह लगती है कि इसने अपनी कुछ बुनियादी कोशिकीय क्रियाओं के लिए फॉस्फोरस की जगह आर्सेनिक का इस्तेमाल करना सीख लिया है। इस बैक्टीरिया की यह क्षमता दर्शाती है कि जीव कितने कठिन वातावरण में जीवित रह सकते है। जीव वैज्ञानिकों का मत रहा है कि सजीवों को हाइड्रोजन, कार्बन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन और गंधक के अलावा फॉस्फोरस की जरूरत भी अनिवार्य रूप से होती है। फॉस्फेट आयन कोशिकाओं में कई जरूरी कामों में शामिल होता है। जैसे यह डीएनए व आरएनए की संरचना का अंग है, कोशिका झिल्ली बनाने में शामिल है और हर कोशिका में उर्जा का उपयोग जिस एटीपी अणु के जरिए होता है उसमें भी फॉस्फेट अनिवार्य घटक है। मगर अब यूएस भूगर्भ सर्वेक्षण में कार्यरत नासा की अंतरिक्ष जीव विज्ञान शोधकर्ता फेलिस वोल्फ- सिमोन ने बताया है कि प्रोटोबैक्टीरिया कुल हैलोमोनेडेसी का एक बैक्टीरिया फॉस्फोरस की जगह आर्सेनिक से काम चला लेता है। साइंस पत्रिका में प्रकाशित इस खोज से पता चलता है कि फॉस्फोरस को अनिवार्य तत्वों की सूची में से हटाया जा सकता है। रोचक बात यह है कि आर्सेनेट आयन की त्रि-आयामी संरचना ठीक फॉस्फेट के समान चतुष्फलकीय है। यह उसी रास्ते से कोशिका में प्रवेश पा सकता है जिससे फॉस्फेट अंदर घुसता है। दरअसल अधिकांश जीवों में आर्सेनिक विषाक्तता का यही कारण है। अलबत्ता, उक्त बैक्टीरिया की खोज से तो लगता है कि विषाक्तता के बावजूद आर्सेनिक यही भूमिका निभा सकता है। इस बैक्टीरिया का विश्लेषण करने पर पाया गया कि इसकी कोशिकाओं में आर्सनेट की लगभग उतनी ही मात्रा पाई जाती है जितनी फॉस्फेट की अपेक्षा की गई थी। इसका मतलब है कि इसने जहां-जहां फॉस्फेट होना चाहिए वहां-वहां आर्सनेट जोडा है। इस खोज ने कई संभावनायें उजागर की है। खासतौर से वाह्य जीवन की खोज में यह एक नया आयाम जुड गया है। वैसे अभी तथ्यों की पुष्टि इस बैक्टीरिया की कोशिका में पाए जाने वाले विभिन्न जैविक अणुओं की छानबीन के आधार पर की जाएगी।

★★★

पर्यावरण एवं समाज में ध्वनि प्रदूषण का दुष्प्रभाव

डा0 जी.सी. किस्कू, अमित कुमार, पोखराज साहू, ऋषभ वर्मा एवं विनय कुमार

पर्यावरण अनुवीक्षण विभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

बढ़ती अशांति, बढ़ता ध्वनि स्तर,
मानसिक स्वास्थ्य, हो रहा है बद्तर।
अल्प श्रवणता, स्थायी बहरापन,
यही नहीं, बढ रहा पागलपन।।
चाहे हो सड़क या हो थियेटर,
हर जगह अब लाउडस्पीकर।
मानसिक रोग और दुबलापन,
कारण स्पष्ट तीव्र ध्वनि प्रचलन।।

-: हरिचन्द्र व्यास:-

ध्वनि

किसी भी वस्तु से उत्पन्न आवाज को ध्वनि कहते है, वस्तु के गिरने सरकने लुड़कने, हलचल करने, हवा के चलने, पानी के बहने तथा मशीनों के आपस में घर्षण करने से आवाज आने को ध्वनि कहते है। जब ध्वनि की तीव्रता जीवित प्राणियों के लिए नुकसानदायक हो जाती है। तब यह ध्वनि प्रदूषण कहलाती है और यह पूरी प्रक्रिया ध्वनि प्रदूषण का रूप ले लेती है।

ध्वनि (नॉइस) लैटिन शब्द ''नौसिया'' से लिया गया है जिसका अर्थ ''अवांछनीय शोर'' होता है।

ध्वनि प्रदूषण

हमारे पर्यावरण में उपस्थित अवांच्छनीय आवाज, शोर-गुल, जिससे हमारे शरीर के अंगों (कान, सिर, हृदय) आदि पर विपरीत प्रभाव (सिर दर्द, अनिद्रा, व्याकुलता, चिडचिडापन आदि) डालते हैं। शोर एक प्रकार का वायुमण्डलीय या वातावरणीय दबाव है जो कि पर्यावरणीय प्रदूषणों में से एक हैं।

ध्वनि प्रदूषण को इस प्रकार भी परिभाषित कर सकते है

सारिणी-1

शोर की आवृत्ति (डेसिबल)	सहन करने का समय (घंटा/प्रतिदिन)
90	8
92	6
95	4
97	3
100	2
102	1:30
105	1:00
110	0:30
115	0:25

''वह ध्वनि जो हमें अप्रिय लगती है''

ध्वनि अप्रिय या अवांच्छनीय शोर के कारण से होता है। शोर एक अनचाही ध्वनि है जिससे मानव विचलित हो जाता है और बाधा का अनुभव करता है और तनाव में आ जाता है, ध्वनि प्रदूषण कहलाता है। आधुनिक युग वैज्ञानिक युग है इस कथन से कोई परे नहीं है। हम सब अपनी सुविधाओं की पूर्ति के लिए ध्वनि विस्तारक यंत्रों का प्रयोग अधिक से अधिक करने लगे है, वर्तमान समय में सभी मनुष्य शोरयुक्त मशीनों का उपयोग ज्यादा से ज्यादा एवं मनोरंजन के लिए करने लगे है। जैसे निजी वाहनों में सफर करना, धार्मिक कार्यो में ऊँची आवाजों में यंत्र बजाना (मोबाइल, ट्रांजिस्टर, लाउडस्पीकर, टेलीविजन आदि) इसके अलावा प्रौद्योगिकीकरण यातायात के क्षेत्र में वायुयान, रेलगाड़ी आदि में, भवन निर्माण तथा खनिज पदार्थो के खनन कार्यो में, बडे-बडे यंत्रों का उपयोग करने लगे है।

भारत में ध्वनि प्रदूषण एक बहुत बड़ी समस्या के रूप में सामने आ रही है, दस लाख या उससे अधिक आबादी वाले नगरों में ध्वनि प्रदूषण का स्तर बहुत ऊँचा हो गया है क्योंकि जनसंख्या अधिक होने के कारण स्वचलित वाहनों का उपयोग अधिक हो रहा है। वर्तमान समय में केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड दिल्ली (सी.पी.सी.बी) के सर्वे के अनुसार सात महानगरों में ध्वनि प्रदूषण का स्तर विगत वर्षो से दीपावली के समय में इस वर्ष (अक्टूबर 2014) कुछ ज्यादा अनुवीक्षण किया गया जिनमें से निम्न है-

बैंगलुरू, चेन्नई, दिल्ली, हैदराबाद, कलकत्ता, लखनऊ, मुम्बई ।

उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के सर्वे 27 अक्टूबर 2014 (दीपावली के समय) के अनुसार लखनऊ में ध्वनि प्रदूषण जो कि पिछले वर्षों में किय गये सर्वे से 10 से 40 प्रतिशत बढ़ा है। जब कि अन्य प्रदूषणों में बराबर या कम बढ़ोत्तरी पाये गये है।

सरकार द्वारा 1970 तक ध्वनि प्रदूषण पर्यावरण प्रदूषणों में शामिल नही किया गया था। भारत सरकार ने पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के एस.ओ. 528 (इ) के अंतर्गत 28 जून, 1999 को ध्वनि प्रदूषण (नियंत्रण एवं नियंत्रक) अधिनियम, 1999 बनाया जो कि 1 जुलाई सन्, 1999 को जनहित में लागू हुआ।

आठ दशक पूर्व नोबल पुरस्कार विजेता राबर्ट कॉख ने शोर के बारे में कहा था, ''एक दिन ऐसा आयेगा जब मनुष्य को स्वास्थ्य के सबसे बडे शत्रु के रूप में शोर का सामना करना पडेगा।

मनुष्य की शोर को सहन करने की क्षमता इस सारिणी-1 में दी गयी है इससे अधिक होने से यह हानिकारक हो सकता है-

ध्वनि की प्रकृति

जब कोई पदार्थ वायु में एक निश्चित क्रम में फैलता है, जिससे तरंगें निकलती है इन्हें ध्वनि तरंगों या साधारण कम्पन कहते है।

ध्वनि तरंगों के दो प्रमुख लक्षण है-

1. तारत्व

ध्वनि की समान आवृत्ति स्रोत के रूप में कार्य करती है तब तारत्व की सहायता से हम उसके कम्पन की गति

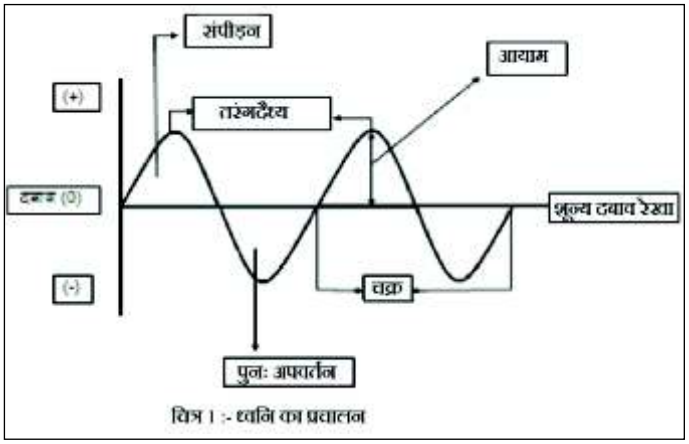

चित्र । :- ध्वनि का प्रचालन

को ज्ञात करते है।

2. आयाम

ध्वनि की समान आवृत्ति समान तारत्व का निर्माण करता है लेकिन प्रत्येक आवृत्ति की ऊर्जा क्षमता भिन्न-भिन्न होती है।

ध्वनि के लक्षण

ध्वनि, गैसीय, जलीय एवं ठोस माध्यमों के मशीनी कम्पन हो जो कि ऊर्जा का स्थानान्तरण स्रोत से दूर ध्वनि तरंगों के माध्यम से प्रचालित होता है। किसी निश्चित समय में वायु में उपस्थित पदार्थ या अणुओं के सम्पीडन एवं पुनःअपवर्तन की संख्या को आवृत्ति कहते है। इसकी इकाई हर्ट्ज है मनुष्य अपने कान से 16 हर्ट्ज से 20 किलो हर्ट्ज तक की आवृत्ति वाली ध्वनि सुन सकता है।

ध्वनि के प्रकार

ध्वनि तीन प्रकार के रूप में पाई जाती है-

1. इन्फ्रासाउण्ड

16 हर्ट्ज से कम आवृत्ति वाली ध्वनियाँ इसके अन्तर्गत आती है।

2. पैरा साउण्ड

16 हर्ट्ज से लेकर 20 हर्ट्ज तक की आवृत्ति वाली ध्वनि इसके अन्तर्गत आती है।

3. अल्ट्रा साउण्ड

20 हर्ट्ज से अधिक आवृत्ति वाली ध्वनि इसके अन्तर्गत आती है।

ध्वनि की इकाई एवं मानक

ध्वनि शक्ति एवं तीव्रता

शक्ति (W) तथा प्रति इकाई क्षेत्र में स्थानान्तरित ध्वनि (A) के अनुपात को ध्वनि की तीव्रता कहते है।

$$\text{तीव्रता} = \frac{\text{शक्ति}}{(A)} \quad \text{वाट / मीटर 2}$$

W = शक्ति A = प्रति इकाई क्षेत्र में स्थानान्तरित ध्वनि

डेसीबल (dB)

यह ध्वनि नापने की इकाई है तथा बेल का 1/10 वां भाग होता है यह दो शक्ति /दबाव/तीव्रता के अनुपात का लघुगुणक होता है।

$$dB = 10 \log_{10} [Q/Qo]$$

जहाँ

Q = मापी गई ध्वनि की शक्ति/दबाव/तीव्रता

Q_0 = संदर्भ शक्ति/दबाव/तीव्रता

ध्वनि दबाव स्तर

ध्वनि दबाव स्तर तथा संदर्भ दबाव के लघुगणकीय अनुपात को ध्वनि दबाव स्तर कहते है।

$$SPL = (dB) = 10 \log_{10} 10 [P/P+]^2$$

SPL dB = $20 \log_{10} [P/P+]^2$

जहाँ

P = ध्वनि दबाव स्तर N/M^2

P+ = संदर्भ दबाव $2x10^{-5}$ N/M^2

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा दिये गये ध्वनि के मानक		
ध्वनि के क्षेत्र	**ध्वनि (डी0बी0) की सीमा**	
	दिन का समय सुबह 6 से शाम 10	रात्रि का समय शाम 10 से सुबह 6
औद्योगिक क्षेत्र	75	70
व्यवसायिक क्षेत्र	65	55
आवासीय क्षेत्र	55	45
संवेदनशील क्षेत्र	50	40

जन्तुओं की सुनने की आवृत्ति	
जन्तुओं के नाम	**सुनने की क्षमता हर्ट्ज**
मनुष्य	**20 से 20,000**
हाथी	**5 से 12,000**
कुत्ता	**50 से 45,000**
बिल्ली	**45 से 65,000**
चूहा	**1,000 से 1,00,000**
चमगादड़	**2,000 से 1,20,000**
व्हेल	**1,000 से 1,20,000**
डालफिन	**75 से 150,000**
गाय	**20 से 35,000**
कछुआ	**20 से 1,000**
मेढक	**100 से 3,000**
मयूर	**200 से 10,000**
चिम्पेंजी	**100 से 200,000**
सर्प	**100 से 1,000**
पक्षी	**66 से 9000**
घोड़ा	**55 से 33.500**
फेरेट	**16 से 44**

ध्वनि मापक यंत्र

शोर मापने के लिए ध्वनि मापक यंत्र का प्रयोग किया जाता है। जिसे ध्वनि स्तर मीटर कहते है। जिसमें ध्वनि को उसके स्रोत के हिसाब से ध्वनि मापक यंत्र के द्वारा मापा जाता है। ध्वनि मापक यंत्र को प्रतिवर्ष अंशांकन (कैलीब्रेशन) करना आवश्यक होता है।

शोर का मापन जमीनी स्तर से 1.2 से 1.5 मीटर ऊपर रखकर तथा स्रोत से 50 फिट की दूरी पर करना चाहिए ध्वनि का मापन 15 मिनट तक करना चाहिए।

शोर के स्रोत को निम्न भागों में बाँटा जा सकता है-

1. औद्योगिकीकृत स्रोतः- औद्योगिक क्षेत्रों में ज्यादा से ज्यादा उत्पादन करने के लिये बड़ी बड़ी मशीनों का उपयोग किया जा रहा है। जैसे :- कम्प्रेसर, जरनेटर, निकासी पंखा, पिसाई मील, टरबाइन और संकेतक यन्त्र जो ज्यादा शोर उत्पन्न करते हैं।

शोर से ध्वनि दबाव स्तर

स्रोत विवरण	मात्रा (डेसिबल)
राकेट इंजन (पास)	180
जेट विमान (पास)	150
वायुवीय रिवेटर	130
जेट विमान (60 मीटर)	120
निर्माण शोर	110
मेट्रो ट्रेन	100
भारी ट्रक (15 मीटर)	90
कारखानें	80
यातायात	70
सामान्य बातचीत 1 मीटर	60
कार्यालय	50
पुस्तकालय	40
साधारण कानाफूसी	30
पत्तियों के रगडने से	20
सामान्य साँस	10
सुनने की सीमा	0

*स्त्रोत-टिप्लर, 1976

2. गैर औद्योगिकीकृत स्त्रोतः-

I. **शहरी नियोजन में कमीः-** विकासशील देशों शहरी नियोजन में कभी भी शोर प्रदूषण उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जैसेः- भीड़ भाड़ वाले घर बड़े परिवारों का बटवारा, पार्किंग के लिये झगड़ा, बुनियादी सुविधाओं के लिये समाज में झगड़े आदि ध्वनि प्रदूषण को बढ़ावा देते हैं।

II. **सामाजिक कार्यः-** शोर सामाजिक घटनाओं में अत्यधिक हो जाती है शादी, पार्टी, धार्मिक कार्यों में ध्वनि विस्तारक यन्त्रों का अत्यधिक प्रयोग करते हैं जैसे लाउडस्पीकर, बैन्डबाजा आदि।

III. **भवन निर्माणः-** भवन निर्माण क्रिया के अन्तर्गत पुल निर्माण, बाँध भवन, स्टेशन, सड़क आदि कार्य आते हैं जो कि पूरे विश्व में इस प्रकार के कार्य हमेशा होता रहता है। जिससे बड़ी बड़ी मशीनों के उपयोग होने के कारण अत्यधिक शोर उत्पन्न होता है।

IV. **घरेलू कार्यः-** हम लोग दैनिक दिनचर्या में अत्यधिक मात्रा में गैजेट्स का उपयोग करते हैं जैसेः- टेलीविजन, मोबाइल, मिक्सर, प्रेशर कूकर, वैक्यूम क्लीनर, वाशिंग मशीन, वातानुकूलित यन्त्र, पंखा आदि।

V **यातायातः-** वर्तमान समय में हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति एवं समय बचाने के लिये तथा यात्रा को सुलभ बनाने के लिए अत्यधिक रूप से छोटे छोटे तथा बड़े से बड़े वाहनों का उपयोग कर रहे हैं। जैसे मोटर कार, बसें, वायुयान, रेलगाड़ी, इत्यादि जिससे अधिक मात्रा में शोर उत्पन्न हो रहा है। जो कि ध्वनि प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है।

VI **व्यवसायिकः-** व्यवसायिक क्षेत्रों में ध्वनि विस्तारक यंत्रों का प्रयोग विज्ञापन के रूप में हो रहा है तथा इन क्षेत्रों में जनसंख्या की अधिकता होने के कारण यह क्षेत्र शोर युक्त हो रही है। जो जीवित जीवधारियों के लिए नुकसान दायक हो सकता है।

ध्वनि प्रदूषण के दुष्प्रभाव

ध्वनि प्रदूषण का दुष्प्रभाव निम्नलिखित हैः-

शोर का मानव स्वास्थ्य पर प्रभावः- मानव शरीर पर

शोर की अधिक आवृत्ति का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव तालिका में निम्न हैः-	
शोर की आवृत्ति डेसीबल	**स्वास्थ्य पर प्रभाव**
80	चिड़चिड़ापन
90	श्रवण शक्ति समाप्त
110	चमड़ी पर उदीयन व सरसराहट
130-135	उल्टी, स्पर्श अनुभव में कमी
150	चमड़ी पर जलन
160	संवेदनशील झिल्लियों का फटना आदि।

शोर के प्रभाव का वैज्ञानिक अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि शोर मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। मानव मस्तिष्क की 12 नसों में से एक सुनने की नस श्रवण तन्त्रिका होती है। इसके दो भाग होते हैं 1 कर्णावर्त तंन्त्रिका 2 प्रमाण तंन्त्रिका। इन्ही के माध्यम से ध्वनि तरंगे कान द्वारा मस्तिष्क तक पहुँचती हैं अधिक शोर का परिणाम इस तंन्त्रिका तन्त्र पर भीषण होता है तथा ऐसे शोर को निरन्तर सुनने से उसकी श्रवण शक्ति पूर्णतः समाप्त हो जाती है।

मनुष्य के स्वचलित स्नायु तंत्र के माध्यम से अधिक शोर का प्रभाव हृदय, पाचन तन्त्रों पर बुरा प्रभाव पड़ता है इसके साथ ही अधिक शोर से मानसिक तनाव, चिड़चिड़ापन व शरीर के रक्त में कोलेस्ट्रोल में वृद्धि हो जाती है।

ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव से निम्न रोग होते हैंः-

श्रवण सम्बन्धी रोगः- बहुत अधिक शोर के कारण स्थायी या अस्थायी बहरापन हो जाना तथा लगातार शोर में रहने के कारण श्रवण शक्ति में गिरावट या बहरापन बढ़ने लगता है। बहरेपन के संकट के कारण कुछ अन्य सूक्ष्म हानिकारक प्रभाव भी देखे गये है।शोर के अनैच्छिक प्रभाव भी होते है। जिसमें अनिद्रा तथा बहरापन मुख्य हैः-

गैरश्रवण सम्बन्धी रोगः-

मनुष्य के कार्य क्षमता में कमीः- वैज्ञानिक प्रभावों से यह सिद्ध होता है कि अत्यधिक ध्वनि या शोर के कारण मनुष्य की कार्य क्षमता में कमी आ जाती है तथा जैसे-जैसे ध्वनि कम की जाती है कार्य क्षमता बढ़ती जाती है।

एकाग्रता का अभावः- कार्य की बेहतर गुणवत्ता के लिए एकाग्रता होनी चाहिए लेकिन वर्तमान समय में बड़े शहरों में ज्यादातर सभी कार्यालय सड़क के नजदीक होने के कारण विभिन्न प्रकार के ध्वनि विस्तारक यंत्र यातायात में प्रयोग किये जा रहें है। मोटर वाहन आदि से उत्पन्न शोर होने के कारण कार्यालय में कर्मचारियों के एकाग्रता में कमी हो रही है।

थकान महसूस करनाः- ध्वनि प्रदूषण की वजह से लोग अपने काम पर ध्यान केन्द्रित नही कर सकते इस प्रकार को पूरा करने के लिए अधिक समय देना पड़ता है जिससे शरीर में थकावट आ जाती है।

गर्भपातः- अचानक तथा शोर महिलाओं में गर्भपात का कारण बन सकता है।

रक्तचापः- अत्यधिक मात्रा में शोर होने से यह व्यक्ति के मन की शान्ति पर हमला करता है, तथा तनाव बढ़ने पर रक्तचाप और मानसिक बीमारी उत्पन्न हो जाती है।

ध्वनि प्रदूषण का पर्यावरण पर प्रभावः-

वनस्पति की गुणवत्ता पर खराब प्रभावः- वनस्पति आम इन्सान की तरह एक जीव है तथा उस पर भी जीवन होता है ध्वनि एक प्रकार का दबाव है जो मनुष्य के अलावा वनस्पति पर भी दबाव डालता है जिस कारण पौधों की वृद्धि तथा उत्पादकता में कमी आती है।

पशु एवं पक्षियों पर प्रभावः- ध्वनि प्रदूषण जानवर के

तन्त्रिका तन्त्र को नुकसान पहुंचाता है पशु अपने मन का नियंत्रण खो देते हैं ज्यादा शोर गुल क्षेत्रों में पक्षियां पलायन कर जाती है तो वह क्षेत्र पक्षी विहीन हो जाता है जिससे जैव विवधता में कमी आती है।

इमारतों पर प्रभावः- अधिक ध्वनि की तरंगों से हमारी इमारतो, भवनों आदि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिससे इमारतों एवं भवनों में दरारें आ जाती है।

ध्वनि प्रदूषण का नियन्त्रणः-

ध्वनि प्रदूषण की समस्या का समाधान कई रूपों में किया जा सकता है चूंकि ध्वनि प्रदूषण के तीन संघटक होते हैः- 1. ध्वनि तथा शोर स्त्रोत 2. ध्वनि तथा शोर के माध्यम 3. ध्वनि तथा शोर से प्रभावित होने वाली वस्तु। अतः इनमे से किसी एक या सभी संघटकों के स्तर पर ध्वनि प्रदूषण को रोकने के लिए प्रयास किये जा रहें है। ध्वनि प्रदूषण का सम्बन्ध व्यक्ति विशेष तथा मानव समुदाय दोनो से होता है इसका समाधान (A) व्यक्तिगत (B) सामुदायिक तथा (C) सरकारी स्तरों पर किया जा सकता है।

व्यक्तिगतः-

अ-1 शोर को फैलाने से रोकनाः- कमरे, कारखानों की दीवारों में ध्वनि अवशोषक पदार्थों का उपयोग करके शोर को फैलने से रोका जा सकता है। जो व्यक्ति फैक्ट्री, औद्योगिक, संस्थान, एयर पोर्ट आदि पर कार्य करते हो उन्हे ''ईयर प्लग्स'' की सुविधा देनी चाहिए।

अ-2 शोर का ध्वनि स्त्रोत पर ही नियंत्रणः- शोर जिस यन्त्र या उपकरण से हो रहा है उस यंत्रों/उपकरणों/मशीनों को इस प्रकार डिजाइन किया जाय जिससे

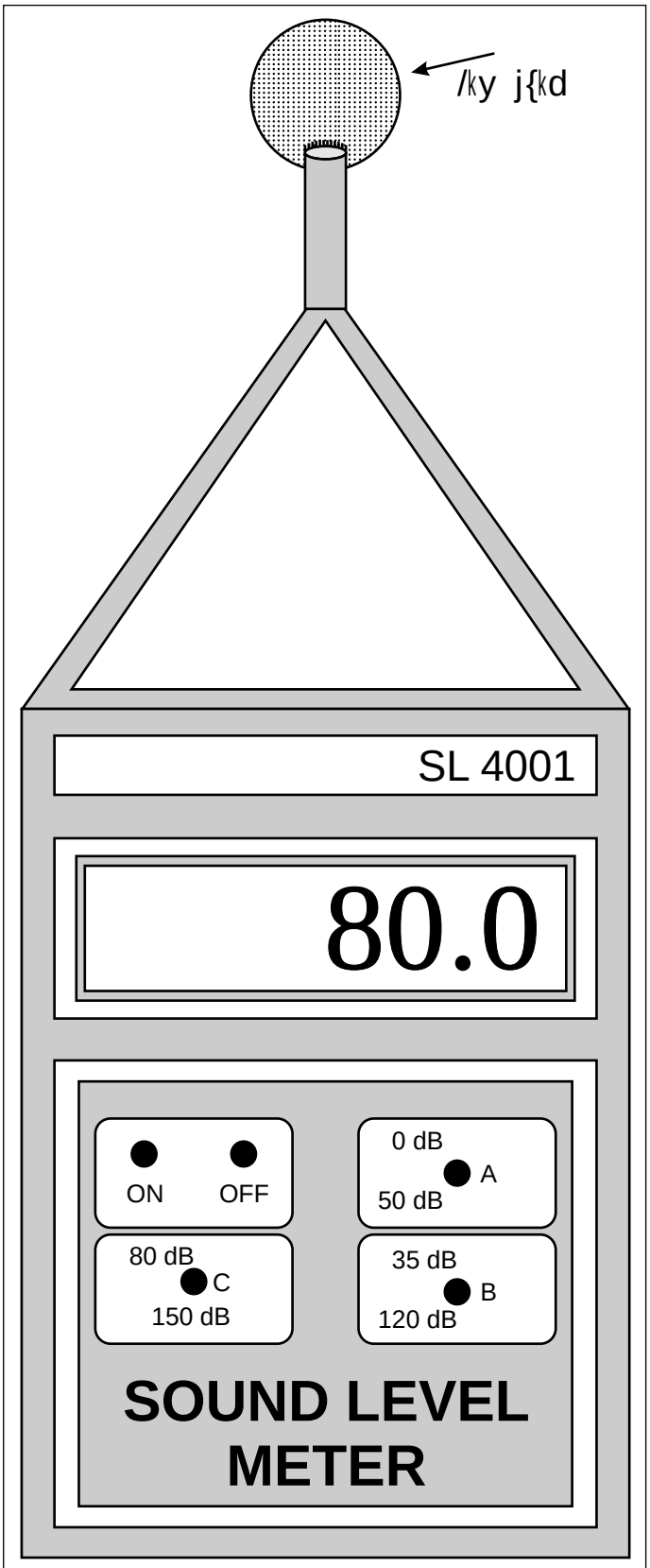

fp= ¼ /ofu ekiu ;U= ¼lkmUM yoy ehVj½

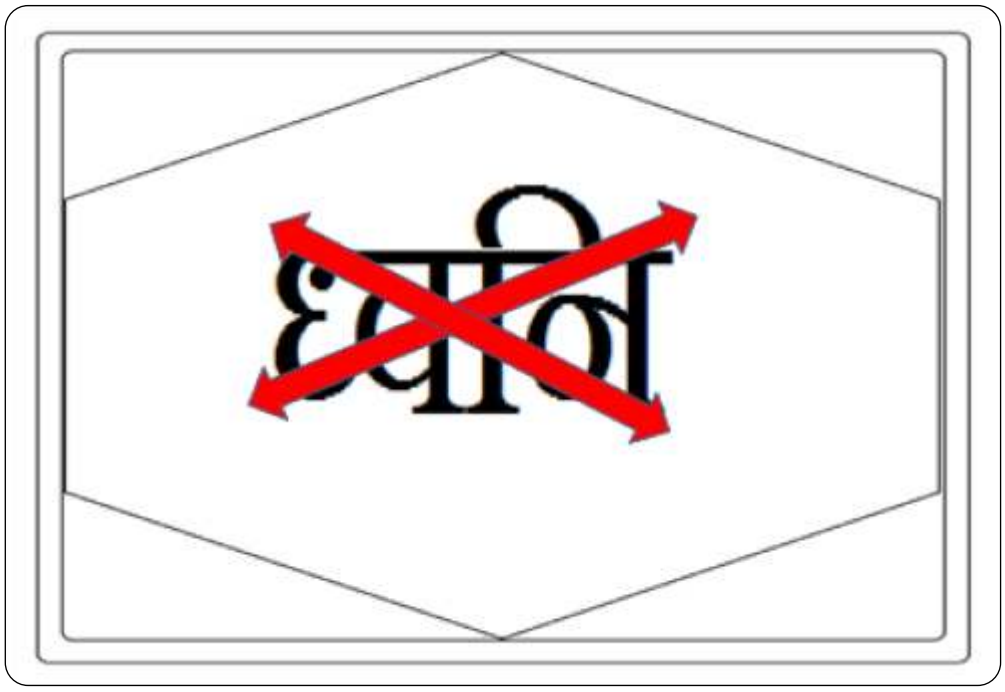

शोर उत्पन्न करने वाले उपकरणों जैसे ट्रक, बस, स्कूटर, मोटरसाइकिल, मशीनों, वायुयान आदि इन्जनों को शोर नियन्त्रण कवचों से ढका जाय सभी वाहनों एवं मशीनों के साइलेंसरों की नियमित जांच हो जिससे शोर कम हो वृक्षो की मोटी पट्टी शोर को कम करती है। जैसे पीपल, नीम, आम, बेल पत्र, युकेलेप्टिस, इमली आदि पेड़ अच्छे ध्वनि अवशोषक वृक्ष होते है।

सामुदायिकः-

ब-1 व्यवस्थाओं में आपेक्षिक परिवर्तन करनाः- ध्वनि से होने वाले परिणाम ध्वनि प्रदूषक का हानिकारक प्रभाव तो उन पर पड़ता है जो वहां रहते है। जहाँ व्यक्तिगत सम्भव हो सके स्वयं और जहां सरकार अथवा संस्थान के अधिकारी, प्रभारी हो उन्हे उन व्यवस्थाओं में परिवर्तन कर लेना चाहिए।

1. अपने घरों में ही टी.वी, टेपरिकार्डर, रेडियो मनोरंजन के साधन को धीमी आवाज से बजाएं सामूहिक कीर्तन, भजन, नमाज अदा करना राष्ट्रीय त्योहारों में लाउडस्पीकर का प्रयोग न करें या करें तो बहुत ही धीमी अवाज होने दें।

2. राष्ट्रीय राजमार्ग को या भारी वाहनों को आबादी वाले क्षेत्रों से न ले जाय तेज हार्न का प्रयोग न करें।

3. संवेदनशील स्थान- अस्पताल, विद्यालय, लैब, अधिक आबादी वाले क्षेत्र में, साइलेन्स जोन बना दिये जाये।

4. रेल इन्जनों हवाई अड्डों पर शोर एक चिन्ता का विषय है इस दिशा में वैज्ञानिकों को ध्यान देना चाहिए।

5. जेट इन्जनों हवाई अड्डों पर शोर नियन्त्रण करने हेतु उनके टर्बोजेट इंजनों शोर

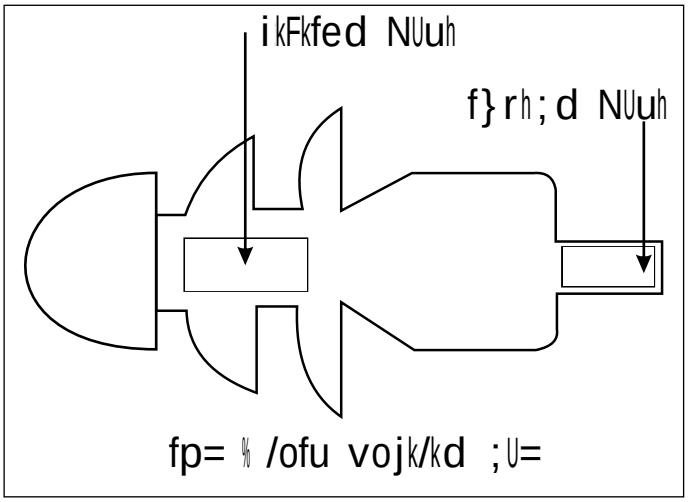

fp= % /ofu vojk/kd ;U=

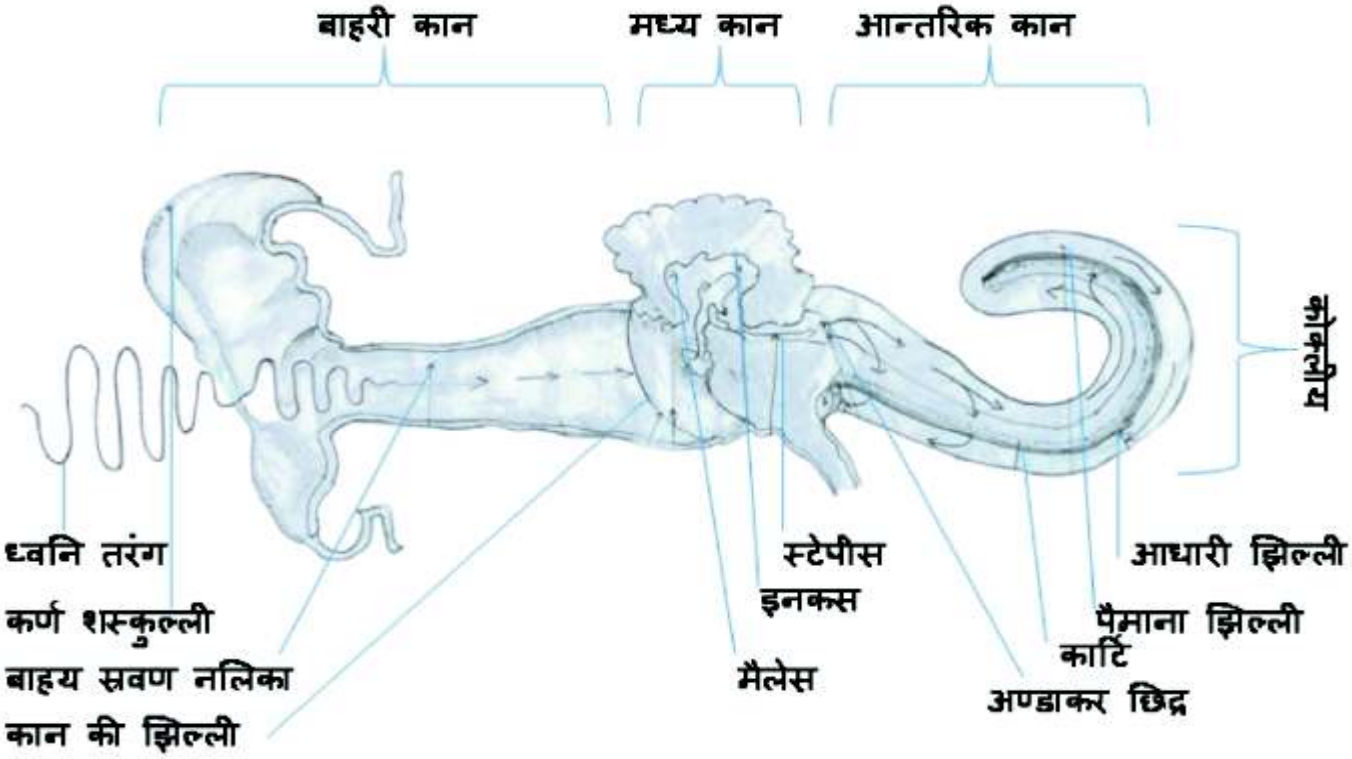

चित्र 4 :- मनुष्य के कान की आन्तरिक संरचना एवं ध्वनि का प्रचालन

अवशोषकों का प्रयोग किया जाने लगा है। यह प्रयोग सब जगह होना चाहिए।

बी-2 ध्वनि प्रदूषण के विषय में शिक्षित करना:- सभी स्तरों व सभी आयु वर्गों के लोगो को ध्वनि प्रदूषण के कारण और उनसे होने वाले दुष्परिणामों के बारे मे यथेष्ट जानकारी दी जाय समाचार पत्र, पत्रिकाएं, रेडियो कार्यक्रम, टी.वी.सीरियल, फिल्मों तथा विद्यालयों के माध्यम से प्रेरित करना चाहिए। ध्वनि समस्या के समाधान के लिए सबसे अधिक प्रभावी कदम कानून बनाना चाहिए इस क्षेत्र में ठोस कदम उठाना चाहिए।

सरकारी:- सरकारी स्तरों में ध्वनि का नियन्त्रण:-

1. ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण एवं नियंत्रक अधिनियम 1999 इस नियम के तहत ध्वनि प्रदूषण को कम करने के लिए बनाया गया है।
2. जीवन जीने की स्वतन्त्रता अधिनियम अनुच्छेद 21 को जानना तथा इसका पालन करना चाहिए।
3. सूचना का अधिकार के अन्तर्गत हम ध्वनि फैलाने वाले उद्योग तथा व्यक्तियों को दण्डित एवं नियन्त्रण कर सकते हैं।
4. ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण एवं नियंत्रक के अधिनियम 1999 के अनुसार किसी भी धर्म के लोगो को प्रयोग करने को नही कहा गया।
5. मौलिक कर्तव्यों देश के हर नागरिक को

पर्यावरण को साफ करने का मौलिक अधिकार प्राप्त है जिसको हमें भली भांति निभाना चाहिए।

निष्कर्षः- सरकार ने ध्वनि प्रदूषण से सम्बन्धित कानून बनाये है लेकिन ध्वनि प्रदूषण से होने वाले खतरनाक प्रभावों के प्रति सामान्य लोगो में जागरूकता तथा शिक्षा की जरूरत है। हमारे देश मे आम तौर पर हो रहे ध्वनि प्रदूषणों में मुख्य रूप से धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों में तथा समारोह पर ध्वनि विस्तारक यन्त्रों का उपयोग जोरशोर से हो रहा है। उन पर होने वाले प्रभावों से अवगत कराने की आवश्यकता है स्कूलों में बच्चों को नागरिकता की भावना सिखाने की आवश्यकता है तथा साथ ही साथ पर्यावरण के प्रति जागरूक तथा पर्यावरणीय प्रदूषण एवं इनके दुष्प्रभाव से अवगत कराने की आवश्यकता है प्रत्येक व्यक्ति को उनके मौलिक कर्तव्यों के बारे में अवगत कराना तथा उनके पालन करने की आवश्यकता है। समाज में ध्वनि प्रदूषण को रोकने के लिए सभी वर्गों का सहयोग अनिवार्य रूप से होने की जरूरत है।

★★★

चमड़ा उद्योग के अपशिष्टों का पर्यावरणीय दुष्प्रभाव एवं उनका जैवीय अपघटन

गौरव सक्सेना[1], आकाश मिश्रा[1], राम चंद्र[2], अभय राज[2], राम नरेश भार्गव[1]

[1]पर्यावरणीय सूक्ष्म-विज्ञान विभाग, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर (केन्द्रीय) विश्वविद्यालय, लखनऊ

[2]पर्यावरणीय सूक्ष्म-विज्ञान अनुभाग, सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

चमड़ा ऊद्योग को हम तकनीकी रूप से "चमड़े का कारखाना" अथवा "टेनेरी" के नाम से भी जानते है। यह विश्व का एक सबसे पुराना व आम उद्योग है। भारत में यह ऊद्योग चमड़े के निर्यात के माध्यम से विदेशी मुद्रा अर्जित करने का एक प्रमुख स्रोत है। इस देश की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए यह उद्योग 25 लाख से भी अधिक लोगों के लिए रोजगार के अवसर प्रदान करता है। भारत के चमडा कारखाने विश्व की कुल चमडा उत्पादन क्षमता में 15 प्रतिशत का योगदान करते हैं। लगभग 5000 से भी अधिक कारखानो के साथ भारत दुनिया में चमड़े का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। आमतौर पर चमड़ा उद्योग अपने जटिल प्रकृति वाले गंदे पानी के कारण एक योजनाबद्ध तरीके से किसी उद्योग क्षेत्र में स्थापित किया जाता हैं क्योंकि यह गंदा पानी पेड-पौधों एवं जीवों के लिए काफी दुष्प्रभावी होता है और पर्यावरण में प्रदूषण फैलाता है। भारत में चमड़ा और चमड़े के उत्पादों के लिए प्रमुख उत्पादन केंद्र तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब और कर्नाटक राज्यों में स्थित है।

चमडा उत्पादन की प्रक्रिया में पानी की एक बड़ी मात्रा के साथ विभिन्न प्रकार के जहरीले रसायनों जैसे फिनाल, रंग, टेनिन और भारी धातुओं जैसे क्रोमियम का उपयोग जानवरों की खाल का चमड़े या चमड़े के उत्पादों में रूपांतरण के लिए किया जाता है। परिणामस्वरूप, गहरे भूरे रंग के अपशिष्ट जल की एक बड़ी मात्रा को वातावरण मे छोड दिया जाता है जो कि

चर्मशोधन अपशिष्ट के भौतिक-रासायनिक गुण तालिका संख्या 1 में प्रस्तुत किए गए हैं।

पैरामीटर	अपशिष्ट जल	अनुमेय सीमा
पी एच	8.85	6.0-8.0
कुल ठोस पदार्थ (मिग्रा/लि.)	2,477	2,200
जैव-रासायनिक आक्सीजन मांग (मिग्रा/लि.)	267	30
रासायनिक आक्सीजन मांग (मिग्रा/लि.)	458	250
सल्फेट (मिग्रा/लि.)	2,400	1,000
नाईट्रेट (मिग्रा/लि.)	12.08	10
फिनाल (मिग्रा/लि.)	10.5	1.0
कुल क्रोमियम (मिग्रा/लि.)	19.57	2.0

मिट्टी और जल प्रदूषण के साथ ही मानव और जानवरों के लिए गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं पैदा करता है।

सभी औद्योगिक अपशिष्टों मे से चर्मशोधन अपशिष्ट जल सबसे ज्यादा पर्यावरण में प्रदूषण फैलता है। चर्मशोधन अपशिष्ट जल, कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थों की उच्च मात्रा से भरपूर एक क्षारीय, और गहरे भूरे रंग का तरल होता है जिसकी प्रकृति प्रयुक्त रसायनों के प्रकार और उनकी मात्रा पर निर्भर करती है। चर्मशोधन अपशिष्ट जल में उच्च जैवीय आक्सीजन मांग, रासायनिक आक्सीजन मांग, कुल ठोस पदार्थों का स्तर और कई प्रकार के विषैले भारी धातु जैसे क्रोमियम होता है जो मानव व अन्य जीव-जंतुओं में विषाक्तता उत्पन्न करते हैं।

चर्मशोधन अपशिष्ट जल पानी और मिट्टी के प्रदूषण का एक प्रमुख स्रोत है। जब चमडा ऊद्योग अपशिष्ट को जल निकायों में छोडा जाता है, तब यह सूर्य की किरणों को जल मे पहुँचने से रोकता है इस प्रकार जलीय पौधों की प्रकाश-संश्लेषण प्रक्रिया को कम करने और जल निकायों मे आक्सीजन की मात्रा को कम करके जलीय जीवन को प्रभावित करता है। कच्चे तालाब, नालियों और खड्डों की मिट्टी के माध्यम से रिस कर भू-जल मे पहुँचने के बाद चमड़ा उद्योग का अपशिष्ट जल उसे पीने के अयोग्य बनाता है। यह पोषक तत्वों से समृद्ध होता है और परिणामस्वरूप जल निकायों में शैवालों की वृद्धि दर को बढ़ा देता और आक्सीजन को कम कर देता है जिससे अवायवीय स्थिति बन जाती है जिसे जल निकायों में एक अजीब सडी गंध से महसूस किया जा सकता है। इसके अलावा, चर्मशोधन अपशिष्ट जल मछलियों और अन्य जलीय जीवों में गंभीर विष प्रभाव डालता है। यह मछलियों व अन्य जलीय जीवों के भ्रूणविकास को बाधित करता है। चर्मशोधन अपशिष्ट जल मे कार्बनिक व अकार्बनिक यौगिक प्रचुर मात्रा मे होते हैं, जोकि जल निकायो में कई किस्म के रोगजनक जीवाणुओं के लिए पोषक तत्व का काम करते हैं और मानव व जीव-जंतुओं में कई प्रकार के खतरनाक रोग फैलाते हैं।

भारत के चमड़ा उद्योग आम तौर पर अपने क्रोमियम युक्त अपशिष्ट जल का निर्वहन आस-पास के नदी/नालों व नहरों में करते है जिसका उपयोग किसानों द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से फसलों की सिंचाई में किया जाता है। मानव, पशुओं और पेड-पौधों के लिए क्रोमियम अत्यन्त विषैला है। यह पौधों की वृद्धि को कम कर देता है, बीज अंकुरण को रोकता है, और पत्तियों में पर्णहरिम को कम कर देता है और परिणामस्वरूप फसल की उपज को कम कर देता है। यह मनुष्यों और पशुओं की त्वचा/नाक में जलन, अल्सर और कैंसर करता है, साथ ही साथ चर्मशोधन अपशिष्ट जल नाइट्रीकरण प्रक्रिया को बाधित करता है। इसलिए, वातावरण में अंतिम निपटान से पहले चमड़ा उद्योग अपशिष्ट जल का पर्याप्त उपचार आवश्यक है।

इसके अलावा, क्रोमियम युक्त चर्मशोधन अपशिष्ट जल उच्च नमक की मात्रा की वजह से भी मिट्टी को प्रदूषित और अम्लीय कर देता है। सल्फाइड की उच्च मात्रा के कारण चर्मशोधन अपशिष्ट जल, मिट्टी में कुछ सूक्ष्म-पोषक तत्वों जैसे जिंक, कापर, आइरन व मैंगनीज आदि की कमी पैदा कर देता है। वातावरण में क्रोमियम प्रदूषण, मिट्टी में उपस्थित सूक्ष्म-जीवों के

समुदायों की संरचना में परिवर्तन व उनके विकास को कम करके जैविक उपचार की प्रक्रिया को रोक देता है। इसके अलावा, फिनाल, जो कि एक अत्यधिक कैंसर व उत्परिवर्तन का जनक है, श्वसन एंजाइमों को नुकसान पहुंचाता है व फेफडों की संचार प्रणाली में रूकावट, दिल की विफलता और केंद्रीय तंत्रिका तंत्र को नुकसान पहुंचाता है। चर्मशोधन अपशिष्ट जल में ऐजो-रंग भी होते हैं जो जटिल रासायनिक संरचना के कारण प्रकृति में काफी समय तक रह कर पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं। पानी की सतह पर ऐजो-रंगो का निर्वहन भी प्रकृति के सौंदर्य को प्रभावित करता है जो की प्रकाश किरणों को जल निकायों की तलहटी तक जाने से रोकता है और इस प्रकार जलीय जीवन को प्रभावित करता है। इसके अलावा, ये ऐजो-रंग मनुष्य में कुछ अन्य गंभीर समस्याएं पैदा करते हैं जैसे त्वचा तथा आंखों में जलन और सांस की समस्या इत्यादि। इसके अलावा, चमड़ा उद्योग अपशिष्ट जल में कई अंतः स्त्रावी ग्रंथियों को नुकसान पहुंचाने वाले यौगिक भी पाये जाते है जैसे नोनायलफिनाल, 4-अमीनोबाई फिनायल, हेक्साक्लोरोबेंजीन व बेंजीडीन, जो कि जीवों में नाजुक हार्मोनल संतुलन को बिगाडते हैं और प्रजनन क्षमता को कम कर देते है।

भारत जैसे विकासशील देशों में, ज्यादातर चमड़ा उद्योग लघु उद्योग हैं और उच्च निर्माण, संचालन और प्रबंधन की लागत की वजह से वे अपने स्वयं के उपचार संयंत्र स्थापित करने में असमर्थ हैं। इसलिए, चमड़ा उद्योगों के एक समूह से प्राप्त अपशिष्ट जल के उपचार के लिए एक आम प्रवाह उपचार संयंत्र (सी.ई.टी.पी.) का प्रयोग किया जाता है।

चमड़ा उद्योग अपशिष्ट जल का उपचार भौतिक, रासायनिक या जैविक विधियों द्वारा किया जाता है। भौतिक-रासायनिक उपचार में बहुत सारे रसायनों का उपयोग होता है फिर भी पर्याप्त रूप से अपशिष्ट जल का उपचार नहीं हो पाता। इसके अलावा, यह महंगा है और कीचड़ की एक बड़ी मात्रा का उत्पादन करता है जिसका निपटान बहुत मुश्किल होता है अंततः पर्यावरण में प्रदूषण करता है। हालांकि, सूक्ष्म-जैवीय उपचार एक अच्छा विकल्प हो सकता है। यह एक कारगर अपशिष्ट प्रबंधन तकनीक है जिसमें दूषित क्षेत्र से प्रदूषणकारी खतरनाक पदार्थों को सूक्ष्म-जीवों द्वारा कम विषाक्त या गैर विषैले पदार्थों में तोड़ दिया जाता है। हालांकि, सभी प्रदूषकों का आसानी से जैविक उपचार नहीं हो पाता, विशेष रूप से क्रोमियम और अन्य भारी धातु को सूक्ष्मजीव आसानी से अवशोषित नहीं कर पाते। इस स्थिति मे प्राकृतिक पौधों या ट्रांसजेनिक पौधों का उपयोग इन विषाक्त पदार्थों को हटाने के लिए किया जाता है जिसे तकनीकी रूप से पौधउपचार या फाइटोरेमेडीएशन कहते है। जैवीय उपचार एक कम लागत और पर्यावरण के अनुकूल उपचार विधि है जिसका आमतौर पर भारत में आम प्रवाह उपचार संयंत्र (सी.इ.टी.पी.) पर उपयोग किया जाता है। इसमे चमड़ा उद्योग अपशिष्ट जल के उपचार के लिए सूक्ष्म-जीवों मुख्य रूप से जीवाणुओं जैसे एसीटोबेक्टर, सिउडोमोनास, बेसिलस, इस्चेरिचिया, स्ट्रेप्टोकाकस आदि का उपयोग किया जाता है। इसके बावजूद, चमड़ा उद्योग अपशिष्ट जल की वजह से पर्यावरण में प्रदूषण और जीव-जंतुओं में विषाक्तता की समस्यायें अभी भी आमतौर पर सामने आ रही हैं। इसलिए, चमड़ा उद्योग अपशिष्ट जल के प्रभावी

(अ) चमड़ा उद्योग से निकलता हुआ अपशिष्ट जल (ब) चमड़ा उद्योग अपशिष्ट जल द्वारा पर्यावरण में प्रदूषण।

उपचार के लिए नए जीवाणु उपभेदों व पौधों की खोज करने की जरूरत है।

★★★

दूध के नमूनो में आक्सीटोसिन की मात्रा एवं उसके संभावित दुष्प्रभाव

मुकुल दास, सुमिता दीक्षित एवं मंजरी मिश्रा

खाद्य विषविज्ञान प्रभाग सी.एस.आई.आर.- भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत में आक्सीटोसिन इंजेक्शन की शीशी, जो कि व्यावसायिक रूप से पिटोसिन (pitocin) या सिंटोसिनोन (syntocinon) के नाम से जाना जाता है, दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए मवेशियों में इंट्रामस्क्युलर इंजेक्शन के रूप में धड़ल्ले से लगाया जाता है। आक्सीटोसिन का इंजेक्शन देने पर यह मवेशियों के रक्त में अवशोषित हो जाता है और प्लाज्मा में इसकी मात्रा 4-5 गुना बढ़ जाती है। आक्सीटोसिन पेप्टाइड छोटे (1 केडी) होने के कारण यह माना गया है कि यह रक्त-दूध बाधा को पार कर दूध में पहुंच सकता है, क्योंकि आक्सीटोसिन तंग स्तन ग्रंथि के जंक्शनों के पारगम्यता में परिवर्तन लाने में सक्षम है।

आक्सीटोसिन हारमोन की खोज विन्सेंट डी बिगनियार्ड द्वारा 1953 में की गयी थी। यह पिट्यूटेरी ग्रंथ से श्रावित होने वाला वो प्रथम हारमोन है, जिसका जैविक क्रियात्मक रूप में रसायनिक संश्लेषण किया गया। आक्सीटोसिन का निर्माण मस्तिस्क के हाइपोथेलेमस भाग में होता है तथा यह न्यूरोहाइपोफाइसिस में संग्रहीत रहता है। यह नौ अमीनो एसिड का बना पालीपेपटाइड है, जिसमे 1,6 डाइसल्फाइड बन्ध पाया जाता है (चित्र 1)। इसका आणविक भार 1007 डाल्टन है तथा यह प्लाज्मा में पिकोग्राम/मि. ली. की सांद्रता में पाया जाता है जो कि शरीर की क्रियात्मकता के अनुसार परिवर्तित होता है।

शरीर में आक्सीटोसिन का प्राथमिक कार्य शिशु जन्म, दुग्ध स्त्रावण व मातृत्व भावना के विकास के रूप में ज्ञात है। जन्म के समय आक्सीटोसिन गर्भाशय की अरेखित पेशियों को संकुचित कर प्रसव को सुगम बनाता है तथा प्रसव के बाद गर्भाशय को सामान्य अवस्था में लाने का कार्य भी करता है। विभिन्न वैज्ञानिकों ने शिशु जन्म के समय आक्सीटोसिन की मात्रा में वृद्धि की पुष्टि की है।

आक्सीटोसिन सामान्य परिस्थितियों में दूध में स्थिर रहता है और मवेशियों में निरंतर आक्सीटोसिन

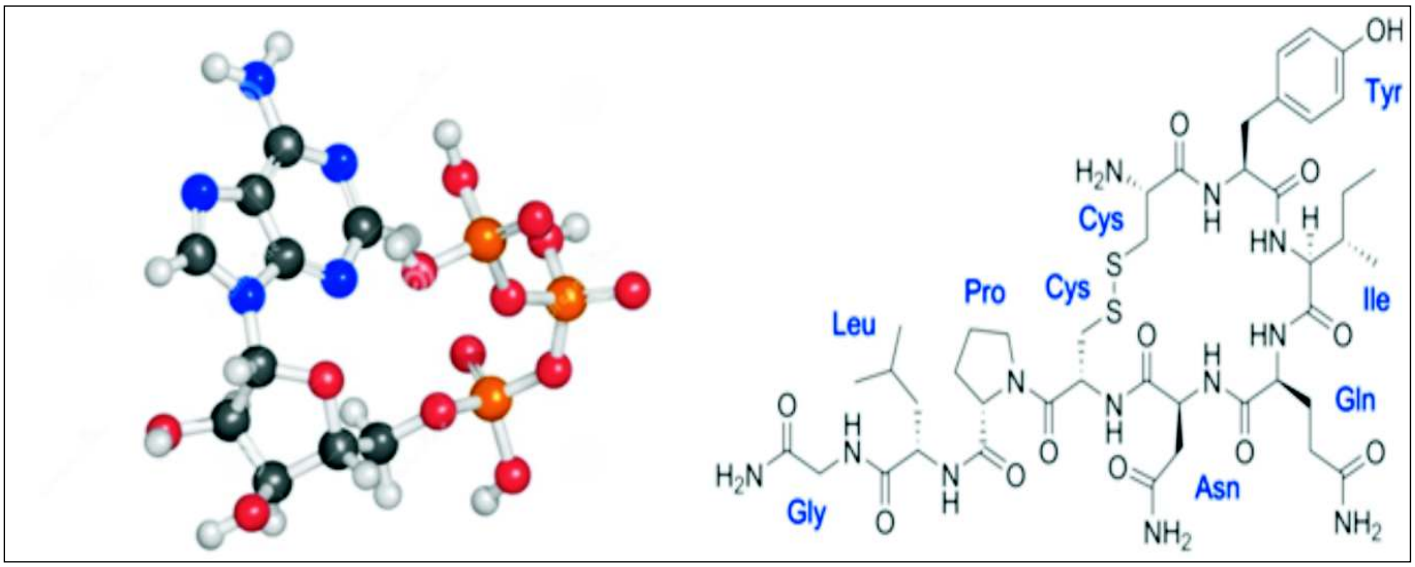

इंजेक्शन देने से दूध में इसका स्तर बढ़ सकता है। अध्ययनों से पता चला है कि चूहों कों रेडियोधर्मी आक्सीटोसिन देने पर प्रसवोत्तर सातवें दिन में नवजात शिशुओं की प्लाज्मा में रेडियोधर्मिता का पाया जाना दूध में आक्सीटोसिन की संभावित हस्तांतरण का संकेत है।

भारत में आक्सीटोसिन एक " schedule ,H " दवा है जो कि डाक्टर के पर्चे के बिना खरीदा या बेचा नहीं जा सकता है और डेयरी उद्योग में इस प्रकार के दवा की उपयोगिता नहीं है, परंतु पता लगाने की विधि में और जागरूकता की कमी के कारण पशुओं में आक्सीटोसिन इंजेक्शन को दूध उत्पादन को बढ़ाने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। एक हार्मोन होने के नाते, जीवन की विशिष्ट अवधि के तहत जैसे गर्भावस्था, प्रसव और प्रसव के बाद आक्सीटोसिन की बहुत कम मात्रा में शरीर को जरूरत पड़ती है। परंतु आक्सीटोसिन दूषित दूध के निरंतर सेवन करने से मानव स्वास्थ्य पर इसका अवांछित प्रभाव पड़ सकता है।

यह देखा गया है की यूं तो आक्सीटोसिन पेप्टाइड्स की जैव प्राप्यता अवशोषण के लिए अपेक्षाकृत कम (0. 5-1%) है परंतु किन्ही प्रतिकूल परिस्थितियों पर जठरांत्र पथ (GI tract) में इसकी वृद्धि भी हो सकती है। हाल ही के एक अध्ययन में, आक्सीटोसिन को तापमान, पीएच और गैस्ट्रिक तरल पदार्थ की प्रतिकूल परिस्थितियों में दूध में स्थिर पाया गया है। इसलिए आक्सीटोसिन दूषित दूध के सेवन करने से 0.5-1% जैव प्राप्य आक्सीटोसिन नवजात शिशुओं और बच्चों के केंद्रीय तंत्रिका तंत्र को प्रभावित कर सकता है। इसके अलावा अध्ययन में यह देखा गया है कि मुख के द्वारा अगर आक्सीटोसिन बचपन से लिया गया है तो शरीर के किसी मुख्य अंग में विषाक्तता का पता नही चलता है। लेकिन इसका लक्ष्य अंग, अंडाशय के लिए चिंता की बात है क्योंकि यह अण्डोत्सर्ग को बढ़ाता है जिसके कि अवांछित परिणाम हो सकते है। इन समग्र परिदृश्य को देखकर एक सर्वेक्षण किया गया जिससे कि दूध में आक्सीटोसिन के मात्रा का पता लगाया जा सके।

दूध के कुल 55 (स्थानीय दूधवालों से 39 और 16 ब्रांडेड) नमूने लखनऊ के विभिन्न भागों से एकत्र किए गए और उन्हे आगे के विश्लेषण के लिए -20^{0} सी पर रखा गया। 150 परिवारों से 15 साल के भीतर बच्चों में दूध की खपत पर एक सीमित परिवार सर्वेक्षण आयोजित किया गया। बच्चों को भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद के दिशा निर्देशों पर तीन आयु वर्गो (0.5-1 साल (शिशु), 2-12 वर्ष (बच्चों) और 13-15 वर्ष (किशोर) में बांटा गया।

दूध के माध्यम से आक्सीटोसिन का सेवन का मूल्यांकन किया गया जिससे कि प्रतिवादी का नाम, आयु, लिंग दूध सेवन की मात्रा पर जानकारी प्राप्त की गयी। आक्सीटोसिन 21 pg/ml से 18.9 ng/ml की मात्रा में सभी दूध के नमूनो में पाया गया। दूधवालों से लिए गए 46% दूध में आक्सीटोसिन की मात्रा 500 pg/ml से कम थी जबकि 31% दूध के नमूनो में आक्सीटोसिन की मात्रा 500 से 1000 pg/ml पायी गयी। 5% दूध में 1-5 ng/ml आक्सीटोसिन पायी गयी और 18% दूध में आक्सीटोसिन 5 ng/ml से ज्यादा थी। ब्रांडेड दूध के किसी भी नमूने में आक्सीटोसिन 1 ng/ml से कम नहीं मिली। 50% ब्रांडेड दूध में आक्सीटोसिन संदूषण की सीमा 1-5 ng/ml और बचे हुए 50% दूध में 5 ng/ml से ज्यादा पायी गयी। आक्सीटोसिन संदूषण की सीमा

सारिणी 1: लखनऊ के विभिन्न जगहों से एकत्रितदूध के नमूनो में आक्सीटोसिन का विश्लेषण			
नमूनो का प्रकार	विश्लेषित नमूनो की संख्या	आक्सीटोसिन की मात्रा (pg/ml)	
		सीमा	औसत
दूधवालों से लिए गए	39	21-12180	2463
ब्रांडेड	16	1320-18923	8881
कुल	55	21-18923	4336

ब्रांडेड दूध में 1.3—18.9 ng/ml तक पायी गयी और औसत मूल्य 8.9 तथा 90जी percentile मूल्य 17.1 ng/ml मिला (सारिणी 1)।

दूध का औसत सेवन 1-3 साल के आयु वर्ग मे 534. 6—542.9 µg/दिन/व्यक्ति पाया गया जो की बाकी दोनों आयु वर्गो से 1.3-1.9 गुना ज्यादा था। इसी कारण इस वर्ग में आक्सीटोसिन दूध के द्वारा सेवन 2. 3-2.4 mg/दिन/व्यक्ति पाया गया जो कि बाकी दोनों आयु वर्गो से 1.3-1.9 गुना ज्यादा था (सारिणी 2)।

सारिणी 2: विभिन्न आयु वर्गो में दूध के माध्यम से आक्सीटोसिन सेवन की मात्रा			
आयु वर्ग	आयु (साल),लिंग, वजन (Kg)	दूध के माध्यम से आक्सीटोसिन का सेवन µg/दिन/व्यक्ति	
		औसत	90th percentile
नवजात	(1-1) पु (8.9)	1.6	2.1
	(1-1) स्त्री (9.1)	1.7	2.2
		2.4	5.2
		2.3	3.9
बच्चे	(1-3) पु (14.8)	1.7	2.2
	(1-3) स्त्री (11.9)	1.8	2.2
	(4-6) पु (19.4)	1.5	2.2
	(4-6) स्त्री (18.4)	1.5	2.2
	(7-9) पु (27.3)	1.8	3.9
	(7-9) स्त्री (25.4)	1.7	3.3
	(10-13) पु (35.4)	1.7	2.2
	(10-13) स्त्री (35.6)	1.2	2.2
किशोर	(13-15) पु (48.2)		
	(13-15) स्त्री (47.5)		

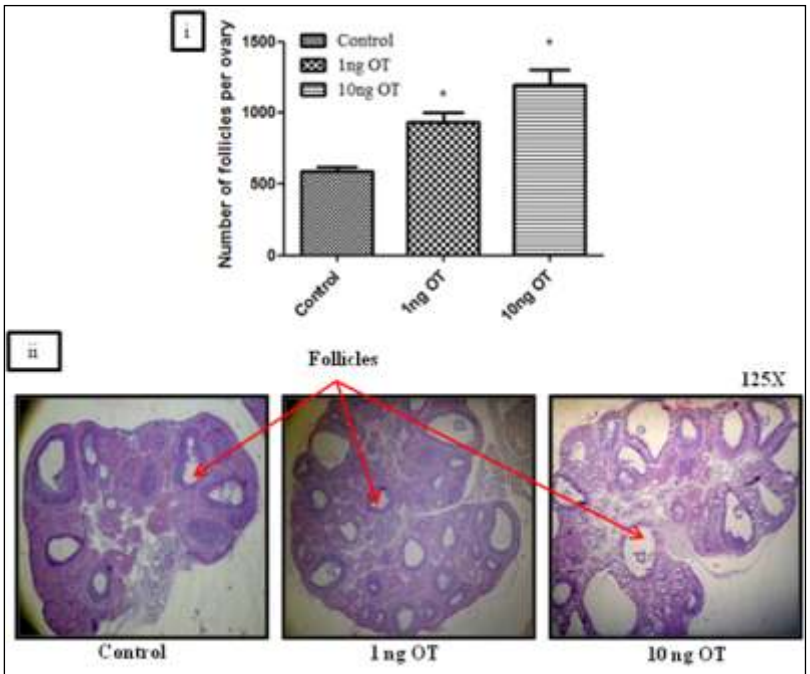

(चित्र 2) अपरिपक्व अंडाशय के (1 और 10 ng आक्सीटोसिन) से विभिन्न चरणों के follicles और ovarian bursa के interstitial सूजन

आक्सीटोसिन के अवांछित प्रभाव आ सकते है। हालांकि दूध में आक्सीटोसिन का सहनीय डोज़ और सुरक्षित स्तर नही नापा गया है, फिर भी अध्ययन से पता चला है कि आक्सीटोसिन की उपस्थिति सामान्य मानव स्तन के दूध में 6.4 से 9.0 पीकोग्राम/मि.ली के बीच है। 9.0 पीकोग्राम/मि.ली आक्सीटोसिन स्तर को अगर सामान्य माना जाए तो वर्तमान अध्ययन में दूध में आक्सीटोसिन का स्तर 273-987 गुना ज्यादा पाया गया है। वर्तमान अध्ययन से यह पता चलता है कि बच्चे आक्सीटोसिन संदूषित दूध के वजह से 2.1-5.2 मि.ग्रा/दिन/व्यक्ति आक्सीटोसिन मात्र के संपर्क में आ सकते है और 1% जैव प्राप्यता को मानते हुए 21-52

बच्चों में दूध प्रोटीन और आवश्यक आहार का मुख्य स्रोत है। डेयरी फार्मिंग में मवेशियों को अक्सर दूध उत्पादन में बढ़त के लिए आक्सीटोसिन के इंजेक्शन लगाए जाते है जो की पिछले कई वर्षो से चिंता का विषय है। परंतु आक्सीटोसिन संदूषित दूध सर्वेक्षण का कोई अध्ययन उपलब्ध नहीं है। इसलिए इस दिशा में एक विस्तृत वैज्ञानिक जांच की आवश्यकता है। वर्तमान अध्ययन में यह पाया गया कि बच्चे जन्म से 15 साल तक संदूषित दूध के वजह से लगातार आक्सीटोसिन के संपर्क में आते रहते है। क्योंकि आक्सीटोसिन तापमान, पीएच और गैस्ट्रिक तरल पदार्थ की प्रतिकूल परिस्थितियों में दूध में स्थिर पाया जाता है, इसलिए बच्चो में

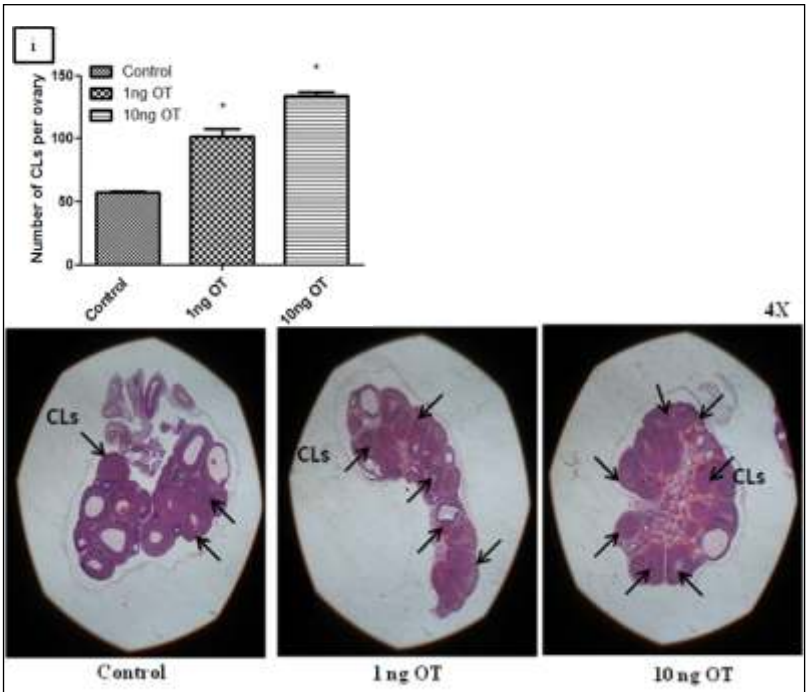

(चित्र 3) अण्डोत्सर्ग के बाद चूहों में (1 और 10 ng) आक्सीटोसिन देने पर सामान्य चूहों के तुलना में अपेक्षाकृत ज्यादा संख्या में corpus luteum

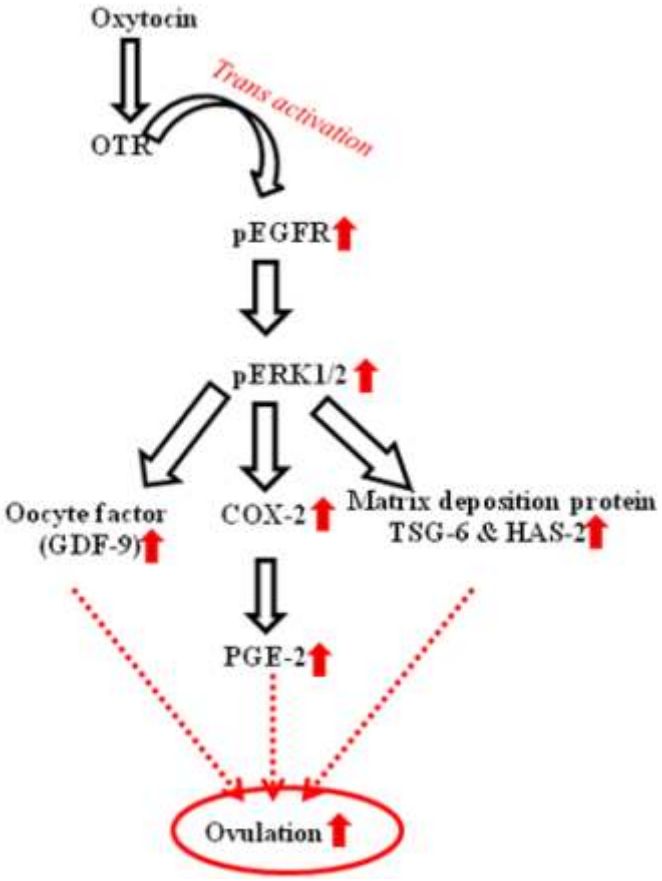

चित्र 4 मादा चूहों के बच्चो मे बाहरी रूप से आक्सीटोसिन देने से अण्डोत्सर्ग में वृद्धि का कल्पित तंत्र

ng/दिन/व्यक्ति आक्सीटोसिन आंत के माध्यम से अवशोषित हो जाएगा जो कि सीरम स्तर को 3 गुना बड़ा देगा। इसलिए जन्म से 15 साल की आयु तक इतने मात्रा आक्सीटोसिन के संपर्क मे रहना एक चिंता का विषय है, क्योंकि आक्सीटोसिन अण्डोत्सर्ग में वृद्धि करता है।

आक्सीटोसिन के संभावित दुष्प्रभाव

वैज्ञानिको ने पाया कि कृत्रिम तरीके से, आक्सीटोसिन देने से डिम्बग्रंथि वजन, ग्लोब्युलिन, फालिकिल की कुल संख्या और कारपस ल्यूटियम की संख्या में वृद्धि होती है जो कि ज्यादा अण्डोत्सर्ग का संकेत देता है। अपरिपक्व अंडाशय के histopathology (1 और 10 नैनोग्राम आक्सीटोसिन) से विभिन्न चरणों के फालिकिल और ovarian bursa के interstitial सूजन के वजह से अंडाशय में वृद्धि पायी गयी (चित्र 2)। अण्डोत्सग के बाद चूहों में 25 दिनों तक (1 और 10 ng) आक्सीटोसिन देने पर सामान्य चूहों के अपेक्षाकृत ज्यादा संख्या में कारपस ल्यूटियम मिले (चित्र 3)।

मादा चूहों के बच्चो मे बाहरी रूप से आक्सीटोसिन देने पर जो अण्डोत्सर्ग में वृद्धि होती है उसका कल्पित तंत्र कुछ इस प्रकार हो सकता है। बाहरी रूप से आक्सीटोसिन देने पर एक आक्सीटोसिन रिसेप्टर सक्रिय हो जाता है जो pEGFR को सक्रिय करता है, वो ERK1/2 (जो की एक प्रोटीन है और अण्डोत्सर्ग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है) को सक्रिय करता है। यह प्रोटीन PGE-2 और COX-2, GDF-9, HAS-2 और TSG-6 प्रोटीन की अभिव्यक्ति को नियंत्रित करता है और साथ ही granulosa cell survival, differentiation, matrix deposition, and cumulus expansion आदि प्रक्रियाओं को नियंत्रित करता है (चित्र 4)

सारांश

समग्र परिणाम से यह निष्कर्ष निकलता है कि आक्सीटोसिन संदूषित दूध पीने से बच्चो के शरीर में वेबजह आक्सीटोसिन का स्तर कई गुना ज्यादा बढ़ जाता है जो अण्डोत्सर्ग में वृद्धि कर सकता है और उसके कई अवांछित परिणाम हो सकते है। अतः नियामक अधिकारियों को मवेशियों में इंट्रामस्क्युलर इंजेक्शन लगाने पर प्रतिबंध लगाना चाहिए जिससे कि जन मानव के स्वास्थ्य पर कोई दुष्प्रभाव न पड़े।

★★★

xg : ifj l j

सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्)

उपलब्ध सेवाएं :

- स्वास्थ्य तथा पर्यावरण अनुवीक्षण
- उपभोक्ता सुरक्षा
- विषाक्तता परीक्षण
- विश्लेषणात्मक सुविधाएं
- सूचना आंकड़े संकलन
  पर्यावरण प्रभाव का आंकलन
- परामर्शदाता
- हानिकारक व्यर्थ औद्योगिक कचरे का निस्तारण
- पर्यावरण प्रबंध योजना
- व्यावसायिक कर्मियों का स्वास्थ्य स्तर
- आपदा प्रबंधन हेतु तैयारी

विस्तृत जानकारी हेतु संपर्क करें :

निदेशक

सी.एस.आई.आर.-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान

पोस्ट बाक्स नं. 80, महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ - 226 001

दूरभाष : 2627586, 2621856, 2611547, 2613786

फैक्स नं० : +91-522-2628227

ई० मेल : iitrindia@iitrindia.org